चौथी दुनिया

हिंदी का पहला साप्ताहिक अखबार

www.chauthiduniya.com

लेफ्ट भी एक चुनौती है

पेज 4

ज़र और ज़मीन की बलि चढ़ती अबलाएं

पेज 6

बाबा और तेंडुलकर कुटुंब

पेज 12

सोना मिला, सोने जैसे खिलाड़ी भी

पेज 15

मूल्य 5 रुपये

दिल्ली, 25 अक्टूबर–31 अक्टूबर 2010

किसी भी क़ीमत पर

इन्हें वोट मत दीजिए

विधानसभा लोकतंत्र का मंदिर है, वहां जाने का अधिकार सिर्फ योग्य, कर्मठ, ईमानदार एवं जनहितैषी शख्स को है, जो नुमाइंदगी के फ़र्ज़ को बख़ूबी निभा सके. दाग़दार दामन वालों और सौदेबाज़ बहुरूपियों को विधानसभा भेजना लोकतंत्र और देश की गरिमा की सरासर अनदेखी है. बिहार की जनता को इस बार पूरी सावधानी से अपने मताधिकार का प्रयोग करना चाहिए, वरना अगले पांच सालों तक हाथ मलने के अलावा उसके पास और कोई चारा शेष नहीं रहेगा.

मनीष कुमार

बिहार के चुनावों में अपराधियों का बोलबाला नज़र आ रहा है. राजनीतिक दलों के कार्यकर्ता ख़ुद को ठगा सा महसूस कर रहे हैं. जिन लोगों ने पांच सालों तक पार्टी के लिए ख़ून-पसीना बहाया, उन्हें दरकिनार करके बिहार में राजनीतिक दलों ने बाहुबलियों को टिकट दिया है. राजनीतिक दलों की दलील बस यह है कि उनके जीतने की संभावनाएं ज़्यादा हैं. इन राजनीतिक दलों से यह सवाल करना ज़रूरी है कि उन्हें ऐसा क्यों लगता है कि पार्टी के साधारण कार्यकर्ता चुनाव हार जाएंगे और जिनके पास पैसा और ताक़त है, वे चुनाव जीत जाएंगे. समझने वाली बात यह है कि जब बाहुबली चुनाव मैदान में होंगे तो वे गांधी के सिद्धातों पर या फिर पार्टी की विचारधारा का प्रचार करके तो वोट नहीं मांगेगे. नीतीश कुमार कहते हैं कि उन्हें अगला मौक़ा मिलना चाहिए, क्योंकि उन्होंने पचास हज़ार अपराधियों को स्पीडी ट्रायल कराकर जेल भेजा. यह बात भी सही है कि अपराधी तो जेल चले गए, लेकिन अपराधियों के सरगना चुनाव लड़ रहे हैं. हर राजनीतिक दल ऐसे लोगों को टिकट देने पर आमादा है, जिनकी पृष्ठभूमि आपराधिक है.

एक अनुमान के मुताबिक़, बिहार में 44 फ़ीसदी उम्मीदवार ऐसे हैं, जिनके ख़िलाफ़ आपराधिक मामले दर्ज हैं. अपराधियों को टिकट देने में किसी भी पार्टी ने कोई कंजूसी नहीं की है. यह आंकड़ा बड़ी-बड़ी पार्टियों द्वारा अब तक घोषित 183 उम्मीदवारों द्वारा पिछले चुनाव में जमा किए गए हलफ़नामों पर आधारित है. मतलब यह कि जब इन उम्मीदवारों ने पिछली बार चुनाव लड़ा था तो चुनाव आयोग को इन्होंने यह जानकारी दी थी. अपराधियों को टिकट देने में सबसे आगे भारतीय जनता पार्टी है, जिसके 62 फ़ीसदी उम्मीदवारों के ख़िलाफ़ आपराधिक मामले चल रहे हैं. दूसरे नंबर पर लोक जनशक्ति पार्टी है, जिसने 53 फ़ीसदी ऐसे उम्मीदवारों को टिकट दिया है. नीतीश कुमार के जनतादल यूनाइटेड ने 33 फ़ीसदी, लालू यादव के राष्ट्रीय जनतादल ने 31 फ़ीसदी और कांग्रेस ने 24 फ़ीसदी ऐसे उम्मीदवारों के टिकट दिया है, जिनके ख़िलाफ़ विभिन्न अदालतों में आपराधिक मामले चल रहे हैं. इन उम्मीदवारों में कुछ के ख़िलाफ़ हत्या का मामला है, कुछ के ख़िलाफ़ हत्या के प्रयास का. कुछ के खिलाफ़ चोरी एवं डकैती तो कुछ के ख़िलाफ़ अपहरण और फिरौती के मामले चल रहे हैं. इनमें ज़्यादातर लोग ऐसे हैं, जिनके ख़िलाफ़ एक से ज़्यादा मामले हैं. मतलब यह कि इन उम्मीदवारों की पृष्ठभूमि ही आपराधिक है. बिहार में ऐसे ही नेताओं को बाहुबली कहते हैं. हैरानी की बात यह है कि इन पार्टियों के नेता अपराधियों को चुनाव में उम्मीदवार भी बना रहे हैं, साथ ही यह भी कह रहे हैं कि राजनीति का अपराधीकरण ख़त्म हो.

बिहार देश का पहला राज्य है, जहां राजनीति का अपराधीकरण हुआ. देश में बूथ कैप्चरिंग की पहली घटना 1967 में बेगूसराय में हुई थी, उस वक़्त यह मुंगेर ज़िले का अंग था. पुलिस की ओर से गोलियां भी चली थीं और बूथ कैप्चर करने वाला एक शख्स मर भी गया था. यह वह ज़माना था, जब चुनाव में ताक़तवर लोग बैलेट बॉक्स लूट ले जाते थे और अधिकारियों से बैलेट छीनकर बोगस वोटिंग करते थे. कमज़ोर वर्ग के लोगों को पोलिंग बूथ तक जाने नहीं दिया जाता था. नेताओं को यह बात समझ में आ गई कि बिना विकास किए, बिना अपने दायित्वों को निभाए लाठी की ताक़त से चुनाव जीता जा सकता है. हर नेता अपने साथ बूथ लूटने वाले गुंडे-बदमाश जोड़ता चला गया. कई चुनावों के बाद इन गुंडों को लगने लगा कि अगर बूथ लूटने से ही चुनाव जीता जा सकता है तो वे किसी और के लिए क्यों, अपने लिए ही बूथ लूटें तो वे भी विधायक और सांसद बन सकते हैं. पहले एक बना, फिर दूसरा. धीरे-धीरे बिहार के अपराधियों ने चुनाव लड़ना अपना लक्ष्य बना लिया. आज हालत यह है कि बिहार की हर सीट पर कोई न कोई बाहुबली चुनाव लड़ने लगा है. राजनीतिक दलों ने भी इनके आगे हथियार डाल दिए हैं. इसलिए आपराधिक छवि वाले नेताओं को टिकट मिल जाता है. इससे राज्य का सबसे ज़्यादा नुक़सान हुआ है. विकास की गति रुक गई है और राजनीति में पढ़े-लिखे लोगों का आना बंद हो गया है. लोग राजनीति को अपराध के एक रूप की तरह देखते हैं. अपराधियों का राजनीति में प्रवेश अब संस्थागत तरीक़े से हो रहा है. लोग पहले अपने इलाक़े में गुंडागर्दी करते हैं, अपराध की दुनिया में अपनी ख़तरनाक़ छवि बनाते हैं और फिर किसी राजनीतिक दल के सदस्य बन जाते हैं. अपराधी इस तरह बड़ी आसानी से चुनावी राजनीति में प्रवेश करने में कामयाब हो जाते हैं. दूसरी तरफ़ राजनीतिक दल हैं, जिनका यह कर्तव्य है कि वे ऐसे लोगों को बढ़ावा न दें, लेकिन अफ़सोस कि वे उन्हें अपना प्रत्याशी बना रहे हैं. अब चुनाव आयोग की कड़ी निगरानी होती है. आज बिहार में छह चरणों में चुनाव इसलिए हो रहे हैं, क्योंकि एक साथ पूरे राज्य में सुरक्षाबलों को लगाना मुश्किल है. अब चुनाव भी पहले की तरह नहीं होते, लेकिन समस्या यह है कि जिस तरह के लोग पहले नेताओं के लिए बूथ लूटा करते थे, वे आज ख़ुद उम्मीदवार बन बैठे हैं. बिहार में राजनीति के अपराधीकरण के लिए राजनीतिक दल ज़िम्मेदार हैं.

राजनीतिक दलों को यह समझना होगा कि राजनीति और चुनावों के अपराधीकरण को रोकने का पहला दायित्व उनका ही है. सबसे पहले उन्हें अपराधियों और आपराधिक छवि वाले लोगों को टिकट न देने का संकल्प लेना होगा. अगर राजनीतिक दल ऐसा नहीं करते हैं तो यह मान लेना चाहिए कि वे अपने कर्तव्यों, जनता और देश के साथ धोखा कर रहे हैं. हालांकि यह मुद्दा ऐसा है कि विभिन्न राजनीतिक दल एक-दूसरे पर अपराधियों को बढ़ावा देने का आरोप लगाते हैं, जबकि सच्चाई तो यह है कि बिहार में कोई भी राजनीतिक दल दूध का धुला नहीं है, सबके दामन में दाग़ है. जो लोग राज्य में क़ानून व्यवस्था की बात करते हैं, उनसे यह सवाल करना ज़रूरी है कि उनकी पार्टी ने अपराधियों को क्यों टिकट दिया? क्या उन्हें लगता है कि जिन अपरधियों की जगह जेल में है, उन्हें विधानसभा में बैठा देने से बिहार में क़ानून व्यवस्था की हालत ठीक हो जाएगी? राजनीतिक दलों को यह भी समझना चाहिए कि ज़माना बदल रहा है. युवा वर्ग राजनीति में ईमानदार, साफ़-सुथरी छवि वाले और पढ़े-लिखे लोगों को देखना चाहता है, लेकिन राजनीतिक दल ठीक इसका उल्टा कर रहे हैं. राजनीतिक दलों से ज़्यादा उम्मीद करना भी बेकार है, क्योंकि उनके लिए चुनाव जीतना ही एकमात्र मक़सद है. भले ही इसके लिए पार्टी के कार्यकर्ताओं और नेताओं को नाराज़ क्यों न करना पड़े, लोगों की आकांक्षाओं-आशाओं की बलि क्यों न चढ़ानी पड़े. यानी राजनीतिक दल किसी भी क़ीमत पर चुनाव जीतना चाहते हैं.

ऐसे माहौल में जब लोगों को ख़राब-अयोग्य उम्मीदवारों के बीच चुनाव करना पड़ता है तो वे वोट देने में रुचि नहीं लेते. उन्हें लगता है कि उनके वोट का हक़दार कोई भी उम्मीदवार नहीं है. ऐसा सोचना ग़लत है, क्योंकि इससे आपराधिक छवि वाले नेताओं को फ़ायदा होता है. वे जीत जाते हैं. अगर राजनीतिक दल अपराधियों को विधायक बनाने पर आमादा हैं तो जनता को भी फ़ैसला करना चाहिए कि चाहे जो भी हो, वह अपना वोट उसी उम्मीदवार को देगी, जो अपराधी या आपराधिक छवि वाला न हो.

सिर्फ़ वोट नहीं, मुस्लिमों की समस्याओं पर भी ध्यान दीजिए

है रॉल्ड लॉसवेल ने राजनीति की सटीक परिभाषा दी. उन्होंने कहा कि किसने क्या, कब और कैसे पाया ही राजनीति का सही अर्थ है. इसका मतलब यह है कि राजनीति असल में सरकारी संसाधनों के बंटवारे की लड़ाई है. संसाधनों की हिस्सेदारी में किसे कब और कितना हिस्सा मिलता है, उसी से यह पता चलता है कि कौन सत्ता के नज़दीक है और कौन सबसे दूर. जिन वर्गों को सरकार से फ़ायदा होता है, जिन्हें ध्यान में रखकर सरकार योजनाएं बनाती है, वही राजनीति की मुख्यधारा में होते हैं, वही सत्ता के क़रीब होते हैं. जिन लोगों को सरकारी नीतियों एवं योजनाओं का फ़ायदा नहीं होता है, वे राजनीति के हाशिए पर होते हैं. वे सिर्फ़ चुनाव में वोट डालने वाले एक मतदाता हैं, जिनका सरकार पर न तो कोई ज़ोर होता है और न ही सरकार उनके बारे में सोचने के लिए बाध्य होती है. बिहार के मुसलमान राजनीति के हाशिए पर हैं. ऐसा महसूस कराया जाता है कि मुसलमान इन राजनीतिक दलों के लिए कितने महत्वपूर्ण हैं, वे वादा भी करते हैं कि सरकार बनते ही सबसे पहला काम मुसलमानों की समस्याओं को निपटाने का होगा. कोई मुसलमान मुख्यमंत्री बनाने का भरोसा देता है तो कोई नाइंसाफ़ी के ख़िलाफ़ आवाज़ बुलंद करता है. आज़ादी हासिल हुए 63 साल हो गए. हर रंग की सरकारें आईं और चली गईं. मुसलमानों की हालत साल दर साल ख़राब होती गई. पहले सत्ता में हिस्सेदारी से गए, फिर विकास की धारा से अलग हुए और अब ज़मीन से बेदखल हो रहे हैं. बिहार में चुनाव है. हर दल ख़ुद को मसीहा साबित करने में लगा है. उसे मुसलमानों का वोट चाहिए, लेकिन मुसलमानों की समस्याओं को ख़त्म करने की बात करने वाला कोई नहीं है.

भारत में उत्तर प्रदेश के बाद सबसे ज़्यादा मुसलमान बिहार में रहते हैं. अगर सरकारी और ग़ैर सरकारी आंकड़ों को ध्यान से देखें तो पता चलता है कि बिहारी मुसलमानों की हालत समाज के सबसे निचले वर्ग से भी बदतर है. वह इसलिए भी, क्योंकि दलित, महादलित और पिछड़ी जातियों को सरकारी मदद मिलती है, आरक्षण मिलता है, लाल कार्ड बांटे जाते हैं, लेकिन मुसलमानों को उनकी समस्याओं से निपटने के लिए अकेला छोड़ दिया गया है. ग़ौर करने वाली बात यह है कि आज़ादी के वक़्त मुसलमानों की हालत

(शेष पृष्ठ 2 पर)

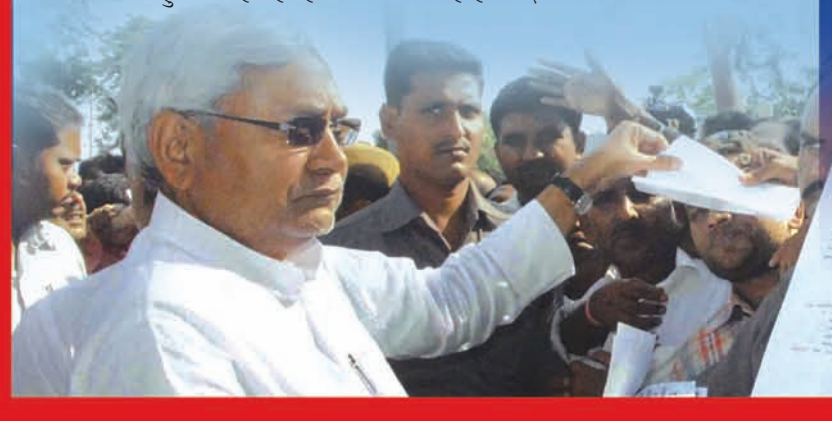

ऐसा लग रहा है कि मोइली क़ानून मंत्रालय के अधिकारियों से भी पंगा लेने में कोई कोताही नहीं कर रहे.

दिल्ली का बाबू

दिलीप चेरियन

परंपरा का अंत

अब तक यह परंपरा थी कि जवाहरलाल नेहरू पोर्ट ट्रस्ट का मुखिया महाराष्ट्र कैडर का कोई आईएएस अधिकारी ही होता था, लेकिन पिछले दिनों केरल कैडर के एल राधाकृष्णन की इस पद पर नियुक्ति के साथ ही यह परंपरा टूट गई. सरकार ने राधाकृष्णन के नाम पर मुहर लगाने से पहले कई महीनों तक विचार किया. पोर्ट के पूर्व अध्यक्ष एस एस हुसैन मार्च में सेवानिवृत्त हुए थे. इसके बाद सरकार ने महाराष्ट्र सरकार द्वारा प्रस्तावित कई नामों पर विचार किया, जिनमें सूचना सचिव अजय भूषण पांडे और जनजातीय विकास विभाग के सचिव उत्तम खोबराबाडे भी शामिल थे, लेकिन अंतिम फ़ैसला राधाकृष्णन के पक्ष में गया, जो इससे पहले केरल जल आयोग के अध्यक्ष थे. माना यह जा रहा है कि मौजूदा दौर में महाराष्ट्र की आईएएस लॉबी केंद्र में कमजोर हो चुकी है और इसी के चलते केरल कैडर का अधिकारी इस पद को पाने में कामयाब हो सका.

सरकार की बेरुख़ी

ऐसा लगता है कि जम्मू–कश्मीर में न्याय का पहिया बेहद आहिस्ता–आहिस्ता घूमता है. खुद राज्य सरकार यह स्वीकार करती है कि राज्य में लोकसेवकों के खिलाफ छह सौ से भी ज्यादा मामले लंबित पड़े हैं. आश्चर्य की बात यह है कि इनमें कई मामले ऐसे हैं, जिनमें मंत्री और वरिष्ठ नौकरशाह आरोपियों में शामिल हैं. सूत्रों से मिली जानकारी के अनुसार, राज्य सतर्कता आयोग फिलहाल राजनीतिज्ञों एवं नौकरशाहों के खिलाफ भ्रष्टाचार के करीब 125 मामलों की जांच कर रहा है. इनमें केंद्रीय प्रशासनिक सेवा और राज्य सेवा के कई ऐसे अधिकारी हैं, जो सेवानिवृत्त भी हो चुके हैं. ऐसे अधिकारियों में पूर्व मुख्य सचिव अशोक जेटली और प्रधान सचिव रह चुके अजीत कुमार शामिल हैं. हालांकि इन दोनों के खिलाफ चल रहे मामलों पर हाईकोर्ट ने रोक लगाई है, लेकिन इसमें कोई संदेह नहीं कि भ्रष्ट अधिकारियों को दंडित करने के मामले में राज्य सरकार अपने पैर पीछे खींचती रही है. उदाहरण के तौर पर देखें तो स्वास्थ्य विभाग के पूर्व निदेशक डॉ. मुजफ्फर अहमद के खिलाफ चल रहा मामला पिछले 11 सालों से लंबित है. जाहिर है कि भ्रष्टाचार के मामलों के तेजी से निष्पादन के लिए सरकार को शीघ्र कदम उठाने होंगे, तभी लोगों का विश्वास बहाल हो सकता है.

नौकरशाही से भिड़े मोइली

कानून मंत्री वीरप्पा मोइली और अफसरशाहों के बीच के रिश्ते पिछले कुछ समय से ठीकठाक नहीं चल रहे. पूर्व मुख्य सतर्कता आयुक्त प्रत्यूष सिन्हा ने सेवानिवृत्ति के समय अपने काम को थैंकलेस जॉब कहा तो मोइली ने खुलेआम उनकी आलोचना कर दी. अब ऐसा लग रहा है कि मोइली कानून मंत्रालय के अधिकारियों से भी पंगा लेने में कोई कोताही नहीं कर रहे. कम से कम नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक (सीएजी) की भूमिका को लेकर कानून मंत्री और उनके मातहत अधिकारियों के बीच के विवाद से तो ऐसा ही लगता है. कानून मंत्रालय के अधिकारियों का मानना है कि सीएजी सरकार के नीतिगत निर्णयों को चुनौती नहीं दे सकता. 2–जी लाइसेंस के मामले में दूरसंचार मंत्रालय ने इसी आधार पर सीएजी के दिशानिर्देशों को खारिज कर दिया था. मोइली का मानना है कि भ्रष्टाचार के मामलों को रोकने में सीएजी को और बड़ी भूमिका निभानी चाहिए. अब इस विवाद में बाजी किसके हाथ लगेगी, यह देखना अभी बाकी है.

dilipcherian@gmail.com

साउथ ब्लॉक

सुरजीत मित्रा वित्त मंत्रालय में

1977 बैच के आईएएस अधिकारी सुरजीत मित्रा अगले साल की शुरुआत में भारत सरकार में सचिव बनेंगे. उच्च पदस्थ सूत्रों के मुताबिक, उन्हें वित्त मंत्रालय में सचिव बनाया जाएगा. मित्रा भी अपनी इस नियुक्ति को लेकर आश्वस्त थे.

पाठक गृह मंत्रालय पहुंचे

बिहार कैडर के आईएएस अधिकारी के के पाठक जल्द ही भारत सरकार के गृह मंत्रालय में संयुक्त सचिव बनाए जाएंगे. पाठक को अशोक लवासा की जगह नियुक्त किया जाएगा.

आलोक निदेशक बनेंगे

1990 बैच के आईओएफएस अधिकारी आलोक कुमार को कॉरपोरेट अफेयर्स मंत्रालय में निदेशक बनाए जाने की संभावना है. वह एम के अरोरा की जगह लेंगे, जिनकी प्रतिनियुक्ति की अवधि खत्म हो चुकी है.

निदेशक बने नीरज

आईडीएएस अधिकारी नीरज कुमार गयाजी, जो 1997 बैच के अधिकारी हैं, शीघ्र ही विज्ञान एवं प्रोद्योगिकी विभाग में निदेशक का पद संभाल सकते हैं. वह नीरज केला की जगह लेंगे, जिन्हें पब्लिक पॉलिसी मैनेजमेंट कोर्स के लिए नीदरलैंड भेजा जा रहा है.

गर्ग की जगह संजीब

उड़ीसा कैडर और 1997 बैच के आईएएस अधिकारी संजीब कुमार मिश्रा जल्द ही भारत सरकार के वाणिज्य मंत्रालय में निदेशक का पद संभाल सकते हैं. वह सुधीर गर्ग की जगह लेंगे, जिन्हें जल संसाधन मंत्रालय में संयुक्त सचिव बनाया गया है.

सिर्फ़ वोट नहीं, मुस्लिमों की समस्याओं पर भी ध्यान दीजिए

पृष्ठ 1 का शेष

काफ़ी बेहतर थी, लेकिन सरकारी रवैये की वजह से दूसरे समुदायों के मुक़ाबले मुसलमान हर क्षेत्र में पिछड़ते चले गए. बिहार में 16.5 फ़ीसदी आबादी मुसलमानों की है. बिहार के 87 फ़ीसदी मुसलमान गांवों में रहते हैं, सिर्फ़ 13 फ़ीसदी शहर में. बिहार में मुसलमान सबसे पिछड़ा समुदाय है. गांवों की हालत ख़राब है. यहां ग़रीबी है, अशिक्षा है, बेरोज़गारी है. ख़राब हालत के बावजूद गांवों में रहने वालों में जो सबसे पिछड़ा तबका है, वे भी मुसलमान ही हैं. इनमें ज़्यादातर मुसलमान भूमिहीन या छोटे किसान हैं. बिहार में 28.4 फ़ीसदी मुसलमान भूमिहीन किसान हैं. सिर्फ़ 35 फ़ीसदी लोगों के पास ज़मीन है, जो आम आबादी के अनुपात में काफ़ी कम है. बिहार में क़रीब 58 फ़ीसदी ग्रामीणों के पास ज़मीन है. खेती करने वाले मुसलमानों संख्या और भी कम है. जिनके पास ज़मीन है, वह भी इतनी कम है कि उनका गुज़र-बसर नहीं हो पाता. हैरानी की बात यह है कि सिर्फ़ तीन फ़ीसदी मुस्लिम किसानों के पास ट्रैक्टर है और सिर्फ़ दस फ़ीसदी के पास पंपिंग सेट. हिंदुओं के मुक़ाबले मुस्लिम किसान ग़रीब हैं. यही वजह है कि 75 फ़ीसदी ग्रामीण मुसलमान खेतों में मज़दूरी करके अपना परिवार चलाते हैं. पिछले पांच सालों में सिर्फ़ .32 एकड़ प्रति परिवार की दर से 2.4 फ़ीसदी मुसलमानों ने ज़मीन ख़रीदी, लेकिन .49 एकड़ प्रति परिवार की दर से 2.5 फ़ीसदी मुसलमानों ने अपनी ज़मीन बेची है. इसका मतलब यह है कि ज़मीन के मालिकाना हक़ से मुसलमान धीरे-धीरे बाहर होते जा रहे हैं. बिहार के गांवों में रहने वाले मुसलमानों में 2.1 फ़ीसदी कारीगर हैं, जिनकी वार्षिक आय महज सोलह हज़ार रुपये है. मतलब यह कि मुसलमान कारीगरों के परिवार ग़रीबी रेखा से नीचे रहते हैं.

बिहार में शिक्षा की स्थिति भी ठीक नहीं है.

साक्षरता दर 47 फ़ीसदी है. पटना, रोहतास और मुंगेर इसमें सबसे आगे हैं. इन तीनों ज़िलों में साठ फ़ीसदी से ज़्यादा साक्षरता दर है. जबकि किशनगंज, अररिया और कटिहार सबसे नीचे हैं. यहां पर सिर्फ़ तीस से पैंतीस फ़ीसदी के आसपास ही लोग शिक्षित हैं. किशनगंज और कटिहार में मुसलमानों की संख्या ज़्यादा है. इन्हें साल भर में सिर्फ़ 230 दिन ही काम मिल पाता है, बाकी के दिनों में ये बेरोज़गार रहते हैं. एक दिन की कमाई 28-32 रुपये है. मतलब यह कि इनकी मासिक आय महज़ 600 रुपये है. इस कमाई से न तो घर चलाया जा सकता है और न ही इज़्ज़त बचाई जा सकती है. इसका मतलब यह है कि बिहार के मुसलमान ग़रीबी और अभावों का दंश झेल रहे हैं. एक अनुमान के मुताबिक़, उनकी सालाना आय 4640 रुपये है और शहर में रहने वालों की सालाना आय 6320 रुपये है. गांव में रहने वाले मुसलमानों में से 49.5 फ़ीसदी और शहर में रहने वाले मुसलमानों में से 44.5 फ़ीसदी लोग ग़रीबी रेखा के नीचे रहते हैं. यानी बिहार में मुसलमानों की क़रीब आधी आबादी ग़रीबी रेखा के नीचे है. इनमें से ज़्यादातर लोग क़र्ज़ में डूबे हुए हैं. घर-मकान के

मामले में बिहारी मुसलमानों में शहर के लोग गांवों से बेहतर हैं. बिहार के गांवों में सभी धर्म के लोगों को मिलाकर 10.1 फ़ीसदी लोगों के पास पक्का मकान है, लेकिन शहरी मुसलमानों में से 25 फ़ीसदी के पास पक्का मकान है. इसका मतलब यह है कि गांव के मुसलमान धीरे-धीरे ग़रीब होते चले गए. उनके पास पूर्वजों के बनाए पक्के मकान तो हैं, लेकिन कमाने का ज़रिया नहीं है.

अगर हम शहरों की बात करें तो दूसरे समुदाय से मुसलमानों की आर्थिक स्थिति गांव के मुक़ाबले और भी ज़्यादा ख़राब है. गांवों में मुसलमानों के पास ज़्यादा पक्के मकान हैं, लेकिन शहरों में दूसरे लोगों के मुक़ाबले मुसलमानों के पास पक्के मकान नहीं हैं. शहर में कुल मिलाकर 57.3 फ़ीसदी आबादी पक्के मकानों में रहती है, लेकिन 51.2 फ़ीसदी मुसलमानों के पास पक्के मकान हैं. बिहार के शहरों में 75 फ़ीसदी घरों में बिजली है, लेकिन मुसलमानों में 47.2 फ़ीसदी लोगों के घरों में बिजली है. राजनीति में भी मुसलमान हाशिए पर चले गए हैं. बिहार विधानसभा में कुल 243 विधायकों में से 16 मुसलमान हैं. पिछले चुनाव में कुल 2135 उम्मीदवार थे, जिनमें 235 मुसलमान थे. बड़ी पार्टियों में सिर्फ़ कांग्रेस और लोक जनशक्ति पार्टी ने अनुपात से ज़्यादा मुसलमानों को उम्मीदवार बनाया. कांग्रेस ने 23.5 फ़ीसदी और लोक जनशक्ति पार्टी ने 20.8 फ़ीसदी मुसलमान उम्मीदवार खड़े किए. लालू यादव के राष्ट्रीय जनतादल ने 14.9 फ़ीसदी और समाजवादी पार्टी ने 14.3 फ़ीसदी मुसलमान उम्मीदवार उतारे थे. जहां तक वामदलों की बात है तो उन्होंने मुसलमानों को टिकट देने में कंजूसी की. भारतीय जनता पार्टी को पूरे बिहार में एक ही मुस्लिम उम्मीदवार मिल सका. पिछली बार चुनाव में तीन बड़ी पार्टियों के पास चार-चार मुस्लिम विधायक थे. कांग्रेस सिर्फ़ 9 सीटें जीत पाई थी, उनमें से 4 उम्मीदवार मुसलमान थे. राष्ट्रीय जनतादल और जनतादल यूनाइटेड के पास भी चार मुस्लिम विधायक थे. नेशनलिस्ट कांग्रेस पार्टी, लोक जनशक्ति पार्टी और सीपीआई एमएल के पास एक-एक विधायक था और एक मुस्लिम विधायक निर्दलीय था.

ये आंकड़े सरकार के भी पास हैं. सरकार के पास यह जानकारी है कि मुसलमानों की हालत दूसरे समुदाय से कहीं ज़्यादा ख़राब है. मुसलमानों की हालत आज ऐसी नहीं हुई है, आज़ादी के बाद से ही उनकी हालत में लगातार गिरावट आ रही है. उनकी स्थिति सुधारने के लिए सरकार को नीतिगत तरीक़े से आगे आना था, लेकिन किसी भी सरकार ने इसकी ज़रूरत नहीं समझी. बिहार में जिस तरह नीतीश कुमार ने महादलितों के लिए योजना बनाई, वैसी ही योजना मुसलमानों के लिए भी ज़रूरी थी. बिहारी मुसलमानों की सुकून भरी ज़िंदगी पर ही सवालिया निशान लग गया है. ऐसे में विधानसभा चुनाव हो रहे हैं, मुसलमानों की संख्या ऐसी है कि वे पचास सीटों पर निर्णायक भूमिका में हैं. समस्या यह है कि मुसलमानों की माली हालत पर आवाज़ उठाना तो दूर, राजनीतिक दल उस पर बात करने से भी बचते हैं. अक़लियत का वोट बाज़ार में नीलाम कर दिया जाता है. ग़रीबी, अशिक्षा और बेरोज़गारी के भंवर में फंसे बिहारी मुसलमानों को राजनीति के उस सटीक परिभाषा को याद रखने की ज़रूरत है. उन्हें राजनीतिक दलों से यह ज़रूर पूछना चाहिए कि पिछले पचास सालों में मुसलमानों को सरकारी संसाधनों में कब, किसे और कितना हिस्सा मिला है?

manish@chauthiduniya.com

चौथी दुनिया
देश का पहला साप्ताहिक अखबार

वर्ष 2 अंक 33
दिल्ली, 25 अक्टूबर–31 अक्टूबर 2010

संपादक
संतोष भारतीय

मैसर्स अंकुश पब्लिकेशंस प्राइवेट लिमिटेड के लिए मुद्रक व प्रकाशक रामपाल सिंह भदौरिया द्वारा जागरण प्रकाशन लिमिटेड डी 210–211 सेक्टर 63, नोएडा उत्तर प्रदेश से मुद्रित एवं के – 2, गैनन, चौधरी बिल्डिंग, कनॉट प्लेस, नई दिल्ली 110001 से प्रकाशित

संपादकीय कार्यालय

के –2, गैनन, चौधरी बिल्डिंग
कनॉट प्लेस, नई दिल्ली 110001

कैंप कार्यालय एफ–2, सेक्टर –11, नोएडा
गौतमबुद्ध नगर उत्तर प्रदेश–201301

फोन न.

संपादकीय 0120–4783999/11–23418962
विज्ञापन + 91 9810017924
प्रसार + 91 9013478398
फैक्स न. 0120–4783950

पृष्ठ–16 (+4)

चौथी दुनिया में छपे सभी लेख अथवा सामग्री पर चौथी दुनिया का कॉपीराइट है. बिना अनुमति के किसी लेख अथवा सामग्री के पुनः प्रकाशन पर क़ानूनी कार्रवाई की जाएगी.

समस्त कानूनी विवादों का क्षेत्राधिकार दिल्ली न्यायालयों के अधीन होगा.

हॉट सीट राघोपुर

घर के लाल और मेहमान में जंग

सरोज सिंह

राघोपुर एक बार फिर अनोखे चुनावी युद्ध का गवाह बना हुआ है. इस बार यहां घर के लाल सतीश यादव और पांच साल में एक बार दर्शन देने वाली मेहमान राबड़ी देवी के बीच आर-पार की जंग छिड़ी है. वादों और नारों से पूरा दियारा गूंज रहा है. चौक-चौराहे पर बस एक ही चर्चा है कि क्या इस बार बंधक बने राघोपुर को मुक्ति मिल पाएगी? क्या घर के लाल को उसका हक़ मिल पाएगा या एक बार फिर राघोपुर के लोग मेहमान नवाज़ी की धुंध में अपने जख्मों को भूल जाएंगे? लालू प्रसाद की ललकार और नीतीश के जवाबी हमले के बाद पूरे बिहार की नज़र इस हॉट सीट पर टिकी है. पटना में लालू प्रसाद ने ललकारा कि नीतीश कुमार अगर माई के लाल हैं तो राघोपुर में राबड़ी से मुक़ाबला करें. राबड़ी नारी नहीं, चिंगारी है. नीतीश को जवाब देना ही था, वह उन्होंने दिया भी. कहा कि राघोपुर से मेरा प्रत्याशी सतीश माई का भी लाल है और वाई का भी लाल है. सतीश ही राबड़ी को हरा देगा. दोनों बड़े नेताओं की ज़ुबानी जंग से राघोपुर की राजनीति गरम हो गई. नीतीश कुमार ने जैसे ही सतीश यादव को वाई के लाल का तगमा दिया, अंदरखाने में यह चर्चा तेज हो गई कि नीतीश सतीश यादव को बिहार में यादव नेता के तौर पर मान्यता देने की हसरत रखते हैं. राघोपुर के यादवों पर इसका ऐसा प्रभाव पड़ा कि कल तक अंदरखाने बोलने वाले बहुत सारे यादव नेता अब खुलकर सतीश यादव के साथ आ गए.

पिछले चुनाव में राबड़ी देवी को 35,891 एवं सतीश यादव को 30,601 मत मिले थे. पिछला चुनाव काफी कम मतों से हारने के बाद सतीश यादव ने इलाक़े से अपना रिश्ता नहीं तोड़ा और वह घर-घर जाकर अपने लिए समर्थन मांगते रहे. इस कारण हर जाति-वर्ग में उनकी गहरी पैठ है. सतीश की ताक़त का एहसास लालू प्रसाद को था. यही वजह है कि उन्होंने राबड़ी देवी को राघोपुर के अलावा सोनपुर से भी चुनाव लड़ाने का फ़ैसला किया. लालू प्रसाद का यह दांव यहां उलटा पड़ता दिख रहा है. लोगों को लग रहा है कि राबड़ी देवी यहां कमज़ोर पड़ गई हैं. यही वजह है कि उन्होंने सोनपुर से भी पर्चा भर दिया. अन्यथा कोई कारण नहीं है कि राघोपुर जैसे यादव बहुल क्षेत्र पर भरोसा न किया जाए. क्षेत्र में लगी तीन महापंचायतों के जो स्वर थे, उससे यही अनुमान निकलता है कि यादवों में राबड़ी देवी को लेकर अब पहले जैसा आकर्षण नहीं है. परिसीमन के बाद हाजीपुर विधानसभा क्षेत्र की जो छह पंचायतें राघोपुर के साथ जुड़ीं, वहां के मतदाता सवाल पूछ रहे हैं कि मुख्यमंत्री और विपक्ष की नेता राबड़ी देवी ने राघोपुर के लिए क्या किया? इसे सभी जानते भी हैं. राघोपुर आज भी विकास के मामले में काफी पीछे है. ग़ौरतलब है कि इन छह पंचायतों में यादवों की संख्या अच्छी है. जहां तक राजपूत मतदाताओं का सवाल है तो इस बार उनके मन में एक बात को लेकर बहुत पीड़ा है कि दिग्विजय सिंह की विधवा पुतुल सिंह के ख़िलाफ़ लालू प्रसाद को प्रत्याशी नहीं उतारना चाहिए.

राजपूतों का कहना है कि लालू प्रसाद एवं प्रभुनाथ सिंह ने ख़ुद कई बार कहा था कि बांका में पुतुल सिंह का साथ दिया जाएगा, लेकिन अंतिम समय में जयप्रकाश यादव को वहां से राजद का प्रत्याशी बना दिया गया, जबकि जद-यू और कांग्रेस ने पुतुल सिंह का समर्थन किया है.

राजपूतों का कहना है कि लालू प्रसाद एवं प्रभुनाथ सिंह ने ख़ुद कई बार कहा था कि बांका में पुतुल सिंह का साथ दिया जाएगा, लेकिन अंतिम समय में जयप्रकाश यादव को वहां से राजद का प्रत्याशी बना दिया गया, जबकि जद-यू और कांग्रेस ने पुतुल सिंह का समर्थन किया है. राजपूत इसे धोखे के रूप में देख रहे हैं. प्रभुनाथ सिंह राजपूत मतदाताओं के इस गुस्से को शांत करने में लगे हैं. राजपूतों को मनाने में वह कितना सफल हो पाते हैं, यह तो चुनाव के दिन ही पता चलेगा. पासवानों को लगता है कि अगर पिछले लोकसभा चुनाव में लालू प्रसाद के मतदाताओं ने खुलकर रामविलास पासवान का साथ दिया होता तो वह राघोपुर में न पिछड़ते. राजद-लोजपा की दोस्ती में उस वक़्त जो गांठ पड़ी थी, उसे ख़त्म करने की कवायद जारी है. जद-यू के पक्ष में यहां अति पिछड़े मतदाताओं की गोलबंदी राबड़ी देवी के लिए मुश्किलें पैदा कर रही है. इन सबके अलावा राघोपुर में इस बार जो मुद्दा सबसे ज़्यादा उभर कर सामने आया है, वह है घर के लाल और पांच साला मेहमान का. स्थानीय नेताओं एवं जनता की पीड़ा यह है कि राबड़ी देवी जीतने के पांच साल के बाद ही दर्शन देती हैं. पटना में उनसे सबका मिलना संभव नहीं है. उनके खासमखास भोला राय को लेकर लोगों की नाराज़गी चरम पर है.

दूसरी तरफ़ सतीश यादव को लोग घर के लाल के तौर पर देख रहे हैं. वे मानते हैं कि हारने के बावजूद पिछले पांच सालों से सतीश हर सुख-दुःख में उनके साथ रहे. उनसे जितना बन पड़ा, उन्होंने किया. ऐसे में उनकी मजदूरी देने का वक़्त आ गया है. सतीश यादव कहते हैं कि मैं तो घर का बेटा हूं और बेटा मजदूरी नहीं, आशीर्वाद की चाहत रखता है. परिवार की सेवा के बदले मजदूरी नहीं मांगी जाती, बस आशीर्वाद मिलता रहे. राबड़ी देवी के समर्थकों को लालू के करिश्मे पर भरोसा है. नीतीश ने राघोपुर के साथ-साथ पूरे बिहार को ठगने का काम किया है. उनका दावा है कि समय रहते रूठे लोगों को मना लिया जाएगा और एक बार फिर राबड़ी देवी की जीत होगी. कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि राघोपुर का परिणाम चाहे जो हो, पर यह विधानसभा क्षेत्र एक रोमांचक मुक़ाबले का गवाह बन गया है.

feedback@chauthiduniya.com

राम जन्मभूमि-बाबरी मस्जिद प्रकरण

फ़ैसला न्याय और संविधान की भावना के अनुरूप नहीं

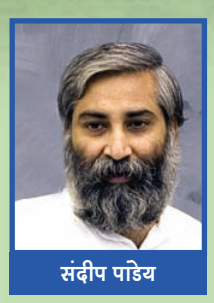
संदीप पांडेय

अयोध्या मामले पर फ़ैसला आ चुका है. चारों तरफ़ सराहना हो रही है कि बहुत अच्छा फ़ैसला है. किसी को निराश नहीं किया. सबसे बड़ी बात यह कि जो शांति व्यवस्था भंग होने का ख़तरा था, वैसी कोई अप्रिय घटना नहीं घटी. शांति व्यवस्था बनी रही. लोगों ने बड़ी संजीदगी से फ़ैसले को सुना और मामले की नज़ाकत को समझते हुए ज़िम्मेदारी का परिचय दिया. सभी मान रहे हैं कि फ़ैसला आस्था के आधार पर हुआ. न्यायाधीशों की यह मंशा थी कि विवाद का हल निकल आए. यह फ़ैसला सभी पक्षकारों को समाधान हेतु प्रेरित करने की दृष्टि से तो बहुत अच्छा है, किंतु यदि संविधान की भावना या क़ानून की दृष्टि से देखा जाए तो इस फ़ैसले में दोष हैं. इस फ़ैसले का एक ख़तरनाक पहलू यह भी है कि भविष्य में इस किस्म के नए विवाद खड़े होने की आशंका पैदा हो गई है.

संविधान में भारत को स्पष्ट रूप से एक धर्म निरपेक्ष देश के रूप में परिभाषित किया गया है. हम किसी एक धर्म को मानने वालों की भावनाओं को किसी दूसरे धर्म को मानने वालों की तुलना में अधिक महत्व नहीं दे सकते. जबकि अयोध्या विवाद के फ़ैसले में ऐसा प्रतीत होता है कि हिंदुओं की आस्था कि भगवान राम बाबरी मस्जिद के बीच वाले गुंबद के ठीक नीचे पैदा हुए थे, को ही आधार बना लिया गया है. क़ानून की दृष्टि से तथ्य हमेशा महत्वपूर्ण होता है, परंतु ऐसा प्रतीत होता है कि प्रत्यक्ष प्रमाण के रूप में खड़ी बाबरी मस्जिद, जिसे 6 दिसंबर 1992 को सबने ढहते देखा और जिसमें 1949 तक नमाज़ अदा की जाती रही हो, को हिंदुओं की आस्था के मुक़ाबले कम महत्व दिया गया. एक तरफ़ प्रत्यक्ष बाबरी मस्जिद थी तो दूसरी तरफ़ आस्था के अलावा न्यायालय के आदेश पर 2003 में विवादित स्थल पर कराई गई खुदाई में निकले एक मंदिर के कुछ अवशेष. वैसे पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग की रिपोर्ट में मंदिर के अवशेषों के अलावा भी खुदाई में पाई गई तमाम चीजों का ज़िक्र है, किंतु निष्कर्ष में मस्जिद निर्माण के पहले इस स्थल पर एक मंदिर होने की बात कही गई है, जो पूर्वाग्रह से ग्रसित लगती है. यदि मान भी लिया जाए कि बाबरी मस्जिद बनाए जाने के पहले उस स्थल पर एक मंदिर था, फिर भी ठीक यही जगह राम जन्मभूमि है, इस बात का क्या प्रमाण हो सकता है? न्यायालय ने भी इस बात को आस्था के आधार पर ही माना है, किंतु यहां सवाल यह है कि क्या किसी न्यायालय का फ़ैसला आस्था के आधार पर हो सकता है?

अपने देश में यह व्यवस्था है कि आज़ादी के दिन जो धार्मिक स्थल जैसा था, उसे वैसा ही स्वीकार किया जाए, लेकिन अयोध्या विवाद के फ़ैसले में क़रीब 500 वर्षों से भी पहले बने एक मंदिर, जिसके सबूत अस्पष्ट हैं, को हाल तक अस्तित्व में रही मस्जिद की तुलना में ज़्यादा तरजीह दी गई है. एक विद्वान न्यायाधीश ने तो अपने फ़ैसले में यहां तक कह दिया कि अब विवादित भूमि पर राम मंदिर निर्माण का मार्ग प्रशस्त हुआ. ज्ञात हो कि मूल विवाद स्वामित्व का है. न्यायालय को 22/23 दिसंबर 1949 की रात जो रामलला की मूर्तियां राम चबूतरे से मस्जिद के अंदर रखी गईं, उस पर निर्णय सुनाना था. विवादित स्थल पर राम मंदिर बने या न बने, इस पर न्यायालय को कोई निर्णय ही नहीं करना था. वैसे भी राम मंदिर बनाने की बात तो अस्सी के दशक में पहली बार की गई थी. यह कितनी मज़ेदार बात है कि जिन बिंदुओं पर न्यायालय से निर्णय की अपेक्षा थी, उन पर कोई निर्णय न देकर वह अपने कार्यक्षेत्र से बाहर जाकर कुछ और निर्णय सुना रहा है. विवादित स्थल पर राम मंदिर बनाने की बात करके उक्त विद्वान न्यायाधीश ने 6 दिसंबर 1992 को बाबरी मस्जिद ढहाए जाने की घटना, जिस पर अभी एक आपराधिक मुक़दमा चल रहा है, को एकाएक जायज़ ठहरा दिया है, क्योंकि यदि न्यायालय यह मानता है कि हिंदुओं की आस्था के अनुसार विवादित स्थल ही राम जन्मभूमि है और एक न्यायाधीश को यह लगता है कि वहां राम मंदिर भी बनना चाहिए तो यह राम मंदिर वहां से बाबरी मस्जिद को बिना हटाए तो बन नहीं सकता. यह रोचक होता, यदि बाबरी मस्जिद अभी भी खड़ी होती तो उक्त विद्वान न्यायाधीश क्या फ़ैसला देते?

इस फ़ैसले से भविष्य में नए विवाद खड़े हो सकते हैं. आस्था के आधार पर ग़ैर क़ानूनी कार्यवाही करके कोई भी किसी जगह पर दावा कर सकता है. ऐसी कार्यवाही सामूहिक हो और विशेषकर बहुसंख्यक समाज का समर्थन उसे हासिल हो तो न्यायालय के लिए उचित निर्णय लेना मुश्किल हो जाएगा. फिर अयोध्या फ़ैसला तो एक नज़ीर बन जाएगा. इस विवाद ने देश की राजनीति को बहुत पीछे ढकेल दिया है. महंगाई एवं खाद्य निगम के गोदामों में सड़ते अनाज के संदर्भ में कृषि मंत्री का यह कहना कि भले ही अनाज सड़ जाए, किंतु ग़रीबों को नहीं दिया जा सकता, आईपीएल घोटाला, राष्ट्रमंडल खेल घोटाला, जम्मू-कश्मीर में लोगों का असंतोष और केंद्र सरकार की नाकामी, कॉरपोरेटीकरण के चलते जगह-जगह अपनी ज़मीन बचाने के लिए संघर्ष और सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायधीशों का भ्रष्टाचार जैसे मुद्दे दबकर रह गए और जनमानस में अयोध्या फ़ैसले का भय व्याप्त हो गया. यह तथ्य कि फ़ैसला आने से ही शांति भंग की आशंका थी, साबित करता है कि इस मुद्दे में हिंसा के बीज छुपे हैं. पहले ही देश इस मुद्दे की वजह से हुई हिंसा का काफ़ी ख़ामियाज़ा भुगत चुका है.

असल में बाबरी मस्जिद के बीच वाले गुंबद के ठीक नीचे राम जन्मभूमि बताना ही झगड़ा खड़ा करने वाली बात है. यदि आम हिंदू, जिसकी आस्था के नाम पर फ़ैसला हुआ है, से पूछा जाए तो शायद वह यह कहे कि उसका कोई ऐसा दुराग्रह नहीं है और न ही वह कोई झगड़ा चाहेगा. यदि हिंदुत्ववादी संगठन राम मंदिर बनाने के इतने ही इच्छुक हैं तो वे अयोध्या स्थित विश्व हिंदू परिषद के स्वामित्व वाले कारसेवकपुरम की भूमि पर मंदिर क्यों नहीं बना लेते? क्या भगवान राम को इस बात का मलाल रहेगा कि उनका भव्य मंदिर ठीक जन्मभूमि वाले स्थान पर नहीं बना? या इसे हिंदुओं की आस्था, जो फ़िलहाल हिंदुत्ववादी संगठनों ने अपहृत कर ली है, में कोई कमी माना जाएगा? मुख्य सवाल यह है कि धर्म के नाम पर राजनीति को भारत के आधुनिक लोकतंत्र में कितनी जगह दी जाएगी? यह बात हम कब कहेंगे कि धर्म और राजनीति का घालमेल नहीं होना चाहिए. अयोध्या विवाद पर इलाहाबाद उच्च न्यायालय का फ़ैसला संविधान के धर्म निरपेक्ष मूल्य, क़ानून एवं न्याय के सिद्धांतों के अनुरूप नहीं है. इससे भारत के भविष्य पर प्रश्नचिन्ह खड़ा हो गया है.

(लेखक मैगसेसे पुरस्कार विजेता हैं)

feedback@chauthiduniya.com

बिहार का यह दुर्भाग्य है कि हर पक्ष कास्ट कैलकुलेशन में ही लगा हुआ है. सारी राजनीति इसी के इर्द-गिर्द घूमती है. अन्य जगहों पर विकास एक मुद्दा होता है.

दिल्ली, 25 अक्टूबर-31 अक्टूबर 2010

चौथी दुनिया

बिहार चुनाव

लेफ्ट भी एक चुनौती है

भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के महासचिव ए बी वर्धन देश के वरिष्ठतम और सम्मानित राजनीतिज्ञों में शुमार किए जाते हैं. देश, विदेश और राज्यों से संबंधित विभिन्न मामलों के वह अच्छे जानकार हैं. बिहार विधानसभा चुनाव का मामला हो या अयोध्या पर आए ताजा फ़ैसले का, वह हर बिंदु पर बेबाक बोलते हैं. चौथी दुनिया के समन्वय संपादक *मनीष कुमार* ने पिछले दिनों उनसे विभिन्न गंभीर मुद्दों पर एक लंबी बातचीत की. पेश हैं मुख्य अंश:

बिहार विधानसभा में पिछली बार आपके पास 10 के आसपास सीटें थीं. इस बार भी कम्युनिस्ट पार्टी चुनाव लड़ रही है, आपकी रणनीति क्या है?

अख़बारों को पढ़ने से तो लगता है कि मानो अभी भी बिहार में चुनाव पोलेराइज़्ड है. एक तरफ़ नीतीश कुमार एवं भाजपा और दूसरी तरफ़ लालू प्रसाद यादव एवं रामविलास पासवान. यह बात पिछले तीन-चार चुनावों में सही थी, लेकिन अब बिल्कुल सही नहीं है. अभी पोलेराइजेशन तो है ही नहीं. कम से कम चार ऐसी पार्टियां हैं, जो लगभग सभी सीटों पर चुनाव लड़ रही हैं. अपर कास्ट का थोड़ा सा हिस्सा, जो लालू प्रसाद के साथ तो कभी नहीं रहा, लेकिन पिछली बार भाजपा के चलते जद-यू के साथ था, इस बार वह कांग्रेस के साथ जाएगा, इससे इंकार नहीं किया जा सकता. इलेक्टोरल फोर्स के रूप में बीएसपी बिहार में कोई बड़ी पार्टी नहीं है, लेकिन वह भी लगभग सभी सीटों पर लड़ रही है. चुनकर भले 3-4 सीट ले आए, लेकिन कई जगहों पर 3-4 हज़ार लोगों को तोड़ने की क्षमता उसके पास है. फिर इस बार तीनों मेजर लेफ्ट पार्टियां भी एक साथ मिलकर लड़ रही हैं. सौ प्रतिशत एकता नहीं है, लेकिन क़रीब 200 सीटों पर वे लड़ रही हैं और उनमें 170 सीटों में एडजस्टमेंट है. 24 सीटें ऐसी हैं, जहां क्लैश है. सीपीआई एमएल का सीपीआई के साथ 17 सीटों पर क्लैश है और सीपीएम के साथ 7 सीटों पर. इसे आप कम मत आंकिए, इसलिए लेफ्ट भी एक चुनौती है. मुझे नहीं लगता कि केवल दो गठबंधन ही सत्ता के दावेदार हैं. लेफ्ट को छोड़कर जितनी पार्टियां हैं, वे सत्ता में रह चुकी हैं, लेकिन लेफ्ट पार्टियां कभी राज्य में सत्ता में नहीं रहीं. बिहार का जो भी बंटाधार हुआ अब तक, उसके लिए लेफ्ट को तो कोई दोषी ठहरा ही नहीं सकता.

नीतीश कुमार के पिछले पांच साल के शासनकाल के बारे में आपकी क्या राय है?

नीतीश के शासनकाल में किडनैपिंग, लॉ एंड ऑर्डर प्रॉब्लम, एब्डक्शन एवं मर्डर जैसी बातें थोड़ी घटी हैं, लेकिन ख़त्म नहीं हुईं. लालू के राज में तो मैं जब कभी पटना से मधुबनी गया तो आठ घंटे लगते थे. सड़कों की हालत बहुत ख़राब थी, उनकी कभी मरम्मत नहीं होती थी. लालू इतने विकास विरोधी थे कि एक बार उन्होंने बयान दिया कि बयानबाज़ी और बकवास करने में उनके जैसा कोई नहीं है. ग़रीबों को सड़कों से क्या लेना-देना, सड़कें तो मोटरगाड़ियों के लिए हैं. यही उनकी विकास के प्रति समझ है. उन्हें विकास की कोई परवाह नहीं थी. नीतीश ने थोड़ा सुधार किया. लॉ एंड ऑर्डर सुधारा, लेकिन उनका यह दावा कि बिहार की विकास दर 11 प्रतिशत है, हास्यास्पद है. बिहार की अर्थव्यवस्था का मुख्य आधार अभी भी कृषि है और उसमें 1-2 प्रतिशत विकास है. इंडस्ट्रीज तो हैं ही नहीं बिहार में. जो सुगर मिल्स थीं, उन्हें भी नहीं खुलवाया गया. उनका दावा वैसा है, जैसा एनडीए सरकार ने इंडिया शाइनिंग का किया था और लोग क़दम-क़दम पर देखते थे कि इंडिया की क्या हालत है. इसलिए इंडिया शाइनिंग उनके लिए उल्टा ही पड़ा. नीतीश का भी दावा टिकेगा नहीं. नीतीश का दावा केवल छलावा है, बेवकूफ बनाने की चाल है. बिहार की जनता बैकवर्ड हो सकती है, लेकिन बिहार बड़ी संख्या में विद्वानों को भी पैदा करता है. इन पार्टियों का विरोध करने की एक हजज़र वजहें हैं. बिहार की जनता अभी अनिर्णय की अवस्था में है. वजह यह है कि नीतीश पिछले पांच साल में विकास का जो दावा कर रहे हैं, वह झूठा है. केवल 17 प्रतिशत सड़कें बनाई या मरम्मत की गईं, बाक़ी उसी हालत में हैं. ग्रामीण क्षेत्रों में रोज़गार नहीं मिलता, लेकिन जब विकल्प की बात आती है तो उनके सामने लालू यादव हैं. लालू कभी विकल्प नहीं हो सकते. लोगों ने उन्हें पंद्रह साल तक देखा है, 7 साल उनके और 8 साल राबड़ी के.

इस बार बिहार में कौन से मुद्दे ज्यादा हावी रहेंगे?

बिहार का यह दुर्भाग्य है कि हर पक्ष कास्ट कैलकुलेशन में ही लगा हुआ है. सारी राजनीति इसी के इर्द-गिर्द घूमती है. अन्य जगहों पर विकास एक मुद्दा होता है. हिंदीभाषी क्षेत्रों, कुछ हद तक दक्षिण भारत में भी जाति एक फैक्टर है, लेकिन बिहार में तो सारा कैलकुलेशन ही इसी आधार पर किया जाता है, जबकि यह आज उतना बड़ा मुद्दा नहीं है. आज हर यादव लालू को वोट नहीं देता, न हर कुर्मी नीतीश का समर्थक है. जातियों के बीच आज उतनी कटुता नहीं है, जो बाबरी कांड से पहले और उसके बाद थी. इसका सबसे बड़ा उदाहरण अयोध्या मामले में आया फ़ैसला है. हम और आप उस पर नुक्ताचीनी करते हैं, जबकि वह कोई ज्यूडिशियल प्रोनाउंसमेंट नहीं है. सभी यही कहते हैं, लेकिन लोग कहीं भी इसके लिए सड़कों पर नहीं उतरे, मारकाट नहीं हुई. तो फिर किस पोलेराइजेशन की बात हो रही है, जिसका लाभ उन्हें मिल सकता है.

लेफ्ट की समस्या यह है कि उसका विरोध दिल्ली में प्रेस कांफ्रेंस और टीवी चैनलों तक ही सीमित होकर रह जाता है. आप अपनी लड़ाई सड़क पर क्यों नहीं लड़ते?

मैं इसे स्वीकार करता हूं, लेकिन जज़्बाती सवालों को लेकर तो हम नहीं जा सकते. बिहार में तो कमीशन बैठाया गया, उसकी रिपोर्ट भी आई. एक हफ्ते के अंदर कह दिया गया कि हम इसे लागू नहीं करेंगे. जितने ज़मीन मालिक थे, छोटे-छोटे ज़मीन मालिक ही होंगे, लेकिन उनके लीडिंग लाइसेंस बड़े-बड़े ज़मीन मालिकों की तरह थे. जद-यू, भाजपा, कांग्रेस एवं राजद सबने विरोध किया. कमीशन की जो रिपोर्ट है, उसकी बड़ी बातों को लेकर अगर हम न भी चलें तो तीन-चार सिफ़ारिशें ऐसी हैं, जिन्हें अमल में लाने में बहुत संघर्ष करना पड़ेगा, ऐसा मैं नहीं मानता. एक सिफ़ारिश है कि घर नहीं हैं, पांच लाख परिवार बेघर हैं, उनकी झोपड़ियां ज़मीन मालिकों के घरों पर बनी हुई हैं. अच्छा, तुम्हारी झोपड़ी अगर वहां पर बनी हुई है तो तुम कुछ अनपेड लेबर, बांडेड लेबर की तरह कुछ तो बेगार दे रहे हो? कहा गया कि इन्हें दस डेसिमल ज़मीन दीजिए. नीतीश ने कहा कि दस डेसिमल बहुत ज़्यादा होता है. अरे भाई, पांच डेसिमल ही दे दो. वह भी नहीं किया. इस मुद्दे पर तीनों लेफ्ट पार्टियां एकमत हैं. जब बात हुई कि किसी दूसरी पार्टी के साथ चर्चा हो सकती है या नहीं, तो द डिवाइडिंग लाइन वॉज दिस...क्या होगा, अगर ऑल अगेंस्ट दि डिस्ट्रीब्यूशन ऑफ लैंड्स.

सीपीआई एमएल ने बीच में एक रैली भी की थी, उस पर पुलिस का रवैया काफी चौंकाने वाला था. उससे यह नहीं लगता कि जैसे-जैसे हम समय के साथ आगे बढ़ रहे हैं... बिहार में ऐसा देखने को मिला है कि चाहे टीचर्स या स्टूडेंट्स प्रोटेस्ट करते हों, चाहे अल्पसंख्यक हों अथवा कोई भी प्रोटेस्ट करता है तो उस पर पुलिस डंडा चलाती है.

एन्रीथिंग इज मेड बाइ द पुलिस. मैं वह जो लैंड रिकॉर्ड कमीशन की बात कर रहा था. 1971 में, फिर 1977 में और एक बार 1960 में. तीन बार हमने बड़े-बड़े लैंड स्ट्रगल किए. अभी भी अगर आप जाएंगे तो मधुबनी में पार्टी कार्यालय के सामने या बेगूसराय में क़रीब सौ-सौ माटियर्स के नाम आपको लिखे मिल जाएंगे. वह ज़मीन उनके क़ब्ज़े में अभी भी है, जो हम लोगों ने वितरित की. सब छीन नहीं सके. लालू ने दो बार वादा किया कि जिनके पास ज़मीन है, वही उसके मालिक होंगे, लेकिन अभी तक कोई पर्चा नहीं मिला. इस वजह से क़ब्ज़े में होते हुए भी ज़मीन उनकी नहीं है. किसानों को क्रेडिट मिलने के लिए ज़मीन मिलना आवश्यक है. फिर लालू ने पर्चे बांट दिए. जिन्हें पर्चे बांटे, उनकी ज़मीन कहां है, कोई नहीं जानता. यानी पर्चा विदाउट ज़मीन और ज़मीन विदाउट पर्चा. हमने कहा कि यह तीर लड़ाई तो कर लो कि ज़मीन किसी के क़ब्ज़े में है और पर्चा दिया है दूसरे को.

फेनटेलिस्टिक पॉलिटिकल पार्टीज के बारे में आपकी क्या राय है?

सबसे बड़ी पॉलिटिक्स तो कांग्रेस और राहुल की है, जो यूथ को अपील है. किस यूथ को? जिनके बाप एमपी, एमएलए और मंत्री रह चुके हैं, उनके लड़के-लड़कियां और भतीजे-भांजे? वे ही अगली जेनेरेशन के हैं. बिहार में लालू ने कितने टिकट बांटे, यह तो नहीं जानता, लेकिन उनका बेटा उत्तराधिकारी ऐलान हो गया. इन दलों की न कोई राजनीति है, न कार्यक्रम और न आइडियोलॉजी. लोगों के बीच आख़िर क्या संदेश जाएगा?

एक और मुद्दा बिहार के लिए खास है कि हर पार्टी नंबर बढ़ा रही है कि उसने कितने हार्डकोर अपराधियों को...वह भी कोई छोटे-मोटे नहीं, लूट-बलात्कार जैसे बड़े-बड़े अपराध करने वालों को टिकट ...

वह तो फिगर आ गया है कि किसके कितने उम्मीदवार ऐसे हैं. राहुल जी ने भी इस बात का कोई जवाब नहीं दिया कि लवली आनंद और पप्पू यादव को टिकट कैसे और कौन से एथिक्स के तहत दिया गया. भाजपा वाले भी उतने ही हैं जितने कांग्रेस के. ये जो दल हैं, दे आर ऑनली फाइटिंग फॉर पावर. और अगर पावर में रहकर रिटायर होने का वक्त आ गया तो बेटे को अपनी जगह कर देते हैं. यही राजनीति का तरीक़ा है.

इस बार लेफ्ट एलायंस को कितनी सीटें मिलेंगी?

मैं इस पर कोई प्रेडिक्शन नहीं करना चाहता. जो भी लड़ रहे हैं, जीतने के लिए लड़ रहे हैं, लेकिन चुनाव में तो दो ही अल्टरनेटिव हैं, तीसरा नहीं है. या तो आप जीतोगे या हारोगे. हर कोई कोशिश करेगा. मनी प्लेज ए बिग रोल, उस मामले में बहुत कमज़ोर रहे हैं हम.

आप उस पीढ़ी के नेता हैं कि जो आप कहते हैं, लोग उसे सुनते हैं और गाइडिंग लाइट हैं, जहां पॉलिटिक्स वॉज बेसिकली बेस्ड ऑन एथिक्स, आइडियोलॉजी. बतौर उदाहरण आप लोगों की चर्चा हम अपने साथियों से करते हैं...

मैं पहली दफा 1957 में चुनकर आया. माय टोटल एक्सपेंडिचर वॉज वन थाउजेंड एट हंड्रेड. पार्लियामेंट में जब खड़ा हुआ थर्ड इलेक्शन में, 1967 या 72 में, उसमें माय एक्सपेंडिचर वॉज वन लेक एंड टू थाउजेंड. अभी तो आप इमेजिन नहीं कर सकते. करोड़ से नीचे सवाल ही नहीं है. हम कहां से करोड़ रुपये लाएंगे?

बाबरी मस्जिद मामले में मुसलमानों को क्या क़दम उठाना चाहिए?

यह जो फ़ैसला है, मुसलमान इससे सबसे ज़्यादा निराश हैं. दोनों पक्षों में किसी के पास साक्ष्य नहीं हैं, बस फेथ. कैसे कह रहे हैं कि यह उनकी जगह है, क्योंकि हिंदुओं की मान्यता है कि राम वहीं पैदा हुए थे. विश्वास पर केवल अगर आप निर्णय करो तो क्या होगा. इसलिए हिंदू हो या मुसलमान, मैं दोनों कम्युनिटी की समझदारी को दाद देता हूं कि कोई मैदान पर नहीं उतरा. यह पंचायत जैसा फ़ैसला है. बीपी राव का भी यही विचार है, यही विचार हिस्टोरियंस का भी है. मैं कहता हूं कि थोड़ा-थोड़ा करके ले लो. हालांकि इट इज नॉट बेस्ड ऑन एनी एविडेंस...इन्हें दो हिस्से और उन्हें एक हिस्सा, क्यों? इसका भी कोई जस्टीफिकेशन नहीं. लेकिन लोगों ने समझदारी दिखाई और किसी तरह उन तक यह बात पहुंची कि जो प्रोसेस है, वह यही है. आपसी समझौते से तो नतीजे तक पहुंच नहीं सकते और आपसी समझौता होगा, इस पर मेरा विश्वास भी नहीं है, क्योंकि अब एक सीमा बांध दी गई है, तुम भी थोड़ा ले लो और तुम भी. मेरा मानना है कि अब जब सब सुप्रीमकोर्ट जाने की बात कर रहे हैं तो वहां विश्वास और फेथ पर आधारित फ़ैसले से बचा जाए.

पश्चिम बंगाल में ममता बनर्जी जिस तरह आगे जा रही हैं, जिस तरह आपने सिंगूर आदि की चर्चा की और सीपीएम की आलोचना की, आपको नहीं लगता कि सीपीएम की नीतियों या समस्याओं के कारण आप लोगों को भी भुगतना पड़ता है?

पश्चिम बंगाल में तीस-चौंतीस सालों में लेफ्ट फ्रंट से सबसे बड़ी जो ग़लती हुई, वह है सिंगूर, नंदीग्राम. लोगों को लगा कि उन्हें जिन्होंने ज़मीन दी थी, वही अब उनसे ज़मीन वापस छीनना चाहते हैं. हम फ्रंट में हैं तो फ्रंट में रहेंगे. ममता बनर्जी का हमला सीपीएम के ख़िलाफ़ है, उसे देखते हुए हम आपस में दरार नहीं होने देंगे. बेशक एक ही नाव के ज़रिए हैं, लेकिन एक ज़माने में क्रेडिट के हिस्सेदार रहे हैं. थोड़ा-बहुत जो अटैक है, उसका भी सामना करने में हिस्सेदार रहेंगे. इस राजनीतिक दबाव को समझना चाहिए.

सभी फोटो-**प्रभात पाण्डेय**

manish@chauthiduniya.com

सत्यमेव जयते

NATIONAL DISASTER MANAGEMENT AUTHORITY
GOVERNMENT OF INDIA

Envisioning a Safer and Disaster Resilient India

During an Earthquake…
DROP ! COVER! HOLD!!

IMPORTANT FACTS TO BE REMEMBERED

- Run towards an open space
- If unable to move outside, bend and take shelter under a table
- Guard your head with some strong object
- Rush and stand in a corner and save your head

DURING AN EARTHQUAKE

* Don't panic and remain calm
* Wait there till shaking is stopped
* Move away from windows, mirrors, bookcase and other unsecured heavy objects
* Do not use elevators instead take the staircase to reach open space

AFTER AN EARTHQUAKE

* After the first tremor, be prepared for after shocks
* Help injured or trapped persons
* Remember to help the people who may require special assistance - infants, elderly and people with disabilities
* Stay out of damaged buildings

To avoid risks - Make your building strong - Seek technical advice

आदिवासियों को भी यह बताने की ज़रूरत है कि डायनों ने उन्हें नुक़ सान नहीं पहुंचाया. नुक़सान तो उन्होंने पहुंचाया, जिन्होंने उन्हें न्यूनतम नागरिक सुविधाओं-शिक्षा, सड़क, बिजली और मानवाधिकारों से वंचित रखा.

ज़र और ज़मीन की बलि चढ़ती अबलाएं

विभिन्न राज्यों में आएदिन प्रकाश में आने वाले डायन हत्या के मामले देश के विकास के गुलाबी आंकड़ों की पोल खोल रहे हैं. ऐसी घटनाओं के पीछे एक सोची-समझी साज़िश है, जिसके तहत अंधविश्वास की आड़ लेकर नेता, प्रधान, दबंग एवं प्रशासन की चौकड़ी दलित और ग़रीब तबके का शोषण कर रही है.

संपत्ति हड़पने के लिए बनाया जाता है डायन.

हर साल 200 महिलाओं को जान गंवानी पड़ती है.

राजेश एस कुमार

छह सितंबर, 2010. पश्चिम बंगाल के उत्तर दिनाजपुर ज़िले का तिलना गांव. एक आदिवासी को गांव वाले पीट-पीटकर मौत के घाट उतार देते हैं. मृतक हेमब्रम सोम का कसूर यह था कि वह एक ऐसी महिला का पति है, जिसे गांव के लोग डायन मानते हैं. हेमब्रम की पत्नी है मालो हांसदा. गांव के एक तांत्रिक के मुताबिक़ वह डायन है. नतीजतन, गांव के लोग इस परिवार के लिए सज़ा तय करते हैं. पति के लिए सज़ा-ए-मौत और मालो के लिए गांव छोड़ने की सज़ा. लेकिन यह कहानी अभी अधूरी है. इस पूरे प्रकरण का असली सच कुछ और है. दरअसल, आदिवासी बहुल तिलना गांव में तीन लोगों की अस्वाभाविक मौत हो जाने से गांव का एक दबंग परिवार ग्रामीणों को लेकर कुशमुड़ी के एक तांत्रिक के पास जाता है और उसके कहने पर लोग मालो को डायन मान लेते हैं. कुछ ही दिनों बाद उस दबंग के पुत्र की बीमारी से मौत हो जाती है और दोष इस परिवार के मत्थे मढ़ दिया जाता है. पंचायत में कथित डायन दंपत्ति पर 5,934 रुपये जुर्माने और एक बीघा जमीन दबंग के नाम लिखने का निर्णय लिया जाता है. जुर्माने की राशि तो सोम अदा कर देता है, पर जमीन देने से मना कर देता है. परिणामस्वरूप उसके पूरे परिवार की जमकर पिटाई की जाती है. जमीन के कागजात पर जबरिया दस्तखत करा लिए जाते

उड़ीसा, छत्तीसगढ़, आंध्र प्रदेश और हरियाणा भी आगे.

हैं और परिवार को गांव छोड़ने का फरमान जारी कर दिया जाता है. पिटाई के दौरान सोम की मौत हो जाती है और उसकी तथाकथित डायन पत्नी गंभीर रूप से घायल. पुलिस ने भी महज़ खानापूरी की और इसे अंधविश्वास का मामला बताते हुए उसने प्राथमिकी दर्ज कर ली.

कुछ दिनों पहले एक ग़ैर सरकारी संस्था रूरल लिटिगेशन एंड एनटाइटिलमेंट केंद्र द्वारा किए गए अध्ययन में बताया गया है कि भारत में हर साल 150-200 महिलाओं को चुड़ैल या डायन होने के आरोप में अपनी जान गंवानी पड़ती है. इस मामले में सबसे ज़्यादा कुख्यात है खनिजों के मामले में पूरे देश में टॉप पर रहने वाला उत्तर भारतीय राज्य झारखंड. यहां प्रति वर्ष 50-60 महिलाओं को डायन कहकर मार दिया जाता है. दूसरे नंबर पर पर आंध्र प्रदेश है, जहां क़रीब 30 महिलाएं डायन के नाम पर बलि चढ़ा दी जाती हैं. इसके बाद हरियाणा और उड़ीसा का नंबर आता है. इन दोनों राज्यों में भी हर साल क्रमश: 25-30 और 24-28 महिलाओं की हत्या कर दी जाती है. इस तरह पिछले 15 वर्षों के दौरान देश में डायन के नाम पर लगभग 2500 महिलाओं की हत्या की जा चुकी है. ये वे आंकड़े हैं, जो किसी तरह प्रथम सूचना रिपोर्ट में दर्ज हो गए. जबकि सर्वविदित है कि सुदूर अंचलों में प्राथमिकी दर्ज कराना किसी आम आदमी के लिए कितना मुश्किल और जोखिम भरा काम है. हक़ीक़त में इन आंकड़ों का स्वरूप और वृहद हो सकता है.

महिलाओं की हत्या के जितने भी मामले दर्ज होते हैं, उनमें अधिकांश की वजह उनका डायन होना बताया जाता है, जबकि कहानी कुछ और होती है. इन हत्याओं के पीछे कई तरह के षड्यंत्र होते हैं. कोई किसी की ज़मीन-संपत्ति हड़पने के लिए डायन का खेल खेलता है तो कोई अपना बाहुबल दिखाने के लिए. कोई वोट बैंक की खातिर तो कोई बदला लेने के लिए. इस खेल में एक दबंग परिवार अंधविश्वास का सहारा लेकर पूरे तबके और क्षेत्र को अपने साथ मिला लेता है. जैसा तिलना गांव में सोम के मामले में हुआ. अपने बच्चे की मौत

झारखंड सबसे ज़्यादा कुख्यात और पहले नंबर पर.

के एवज में दबंग सोम की ज़मीन हड़पना चाहता था. अगर किसी बच्चे की मौत हो जाती है तो क्या उसकी भरपाई आदिवासी की ज़मीन करेगी? व्यक्तिगत फ़ायदे के लिए किसी को भी डायन घोषित कर दिया जाता है. इस बात की गवाही रूरल लिटिगेशन एंड एनटाइटिलमेंट केंद्र (आरएलइके) के मुखिया अवधेश कौशल भी देते हैं. उनके मुताबिक़, ज़्यादातर पीड़ित अकेली रहने वाली विधवा महिलाएं हैं, जो ज़मीन या संपत्ति के लिए निशाना बनाई जाती हैं. विधवा या तलाकशुदा महिलाएं जब गांव के दबंगों की कामेच्छा का विरोध करती हैं तो अक्सर उन्हें डायन घोषित कर दिया जाता है. उन्हें जलील करने के लिए निर्वस्त्र करके गांव में घुमाने, मैला खिलाने, बाल नोंचने और नाखून उखाड़ देने जैसे अमानवीय कृत्यों को अंजाम दिया जाता है. ज़्यादातर मामलों में महिलाएं अपमानित होने के बाद ख़ुद ही आत्महत्या कर लेती हैं.

ग़ौर करने वाली बात यह है कि डायन सदैव दलित या शोषित समुदाय की ही महिला होती है. ऊंचे तबके की महिलाओं के डायन होने की बात शायद ही सुनने को मिलती हो. डायन होने-मानने का अंधविश्वास आदिवासियों में ज़रूर रहा है. वजह, आधुनिक चिकित्सा व्यवस्था और जंगल के अभाव में वे अपना इलाज समुचित ढंग से नहीं कर पाते, पर इस तबके में कभी संपत्ति और दबंगई का मामला नहीं देखा गया. लेकिन तिलना गांव जैसे मामले शिक्षित समाज में व्याप्त लालच की वीभत्स कहानी बयां करते हैं. हम यह नहीं कहते कि आदिवासियों में इस तरह की घटनाएं उचित हैं. आदिवासियों को भी यह बताने की ज़रूरत है कि डायनों ने उन्हें नुक़ सान नहीं पहुंचाया. नुक़सान तो उन्होंने पहुंचाया, जिन्होंने उन्हें न्यूनतम नागरिक सुविधाओं-शिक्षा, सड़क, बिजली और मानवाधिकारों से वंचित रखा. शिक्षित तबके को कुछ समझाने की ज़रूरत नहीं है, क्योंकि आप सोए हुए लोगों को तो जगा सकते हैं, पर उन्हें नहीं, जो सोने का ढोंग कर रहे हैं. इन मामलों की तह तक जाने और आपसी रंजिश की राजनीति को समझने की ज़रूरत है. सरकार को चाहिए कि वह ऐसी वारदातों की रोकथाम के लिए केंद्रीय स्तर पर कोई सख्त क़ानून बनाए. झारखंड, बिहार और छत्तीसगढ़ में इस संदर्भ में क़ानून बनाया गया है, लेकिन उसका पालन शायद ही कभी हुआ हो. अगर इस मामले में किसी को दोषी करार भी दिया जाए तो सबसे बड़ी सज़ा मात्र तीन महीने की क़ैद है. ऑनर किलिंग के नाम पर देश को सिर पर उठा लेने वाला मीडिया, राजनीतिज्ञ, समाजसेवी और गैर सरकारी संगठन भी इस मुद्दे को कोई महत्व नहीं दे रहे हैं. ज़रूरत इस बात की है कि अंधविश्वास को परे हटाकर डायन किलिंग की असलियत समाज के सामने लाई जाए और बताया जाए कि यह सिर्फ़ असरदार लोगों का गंदा खेल है, डायन का नाम तो बस एक बहाना है.

rajeshy@chauthiduniya.com

शहरी लड़कियों की अपेक्षा गांव की इन लड़कियों में समझ कहीं ज़्यादा है और ये काम पर ध्यान देती हैं. वीरबालाओं ने न केवल अपनी आर्थिक स्थिति मज़बूत की, बल्कि अपनी कार्यक्षमता भी साबित कर दी.

शेखावाटी की आधी आबादी

घूंघट विकास में बाधा नहीं

वीरबाला प्रोजेक्ट से जुड़ी युवतियां

सभी फोटो–*प्रभात पाण्डेय*

पर्दा अच्छा होता है या नहीं. इस पर अलग-अलग राय हो सकती है. लेकिन, यह तय है कि पर्दा किसी के विकास में बाधा नहीं बनता. यह साबित किया है, शेखावाटी की उन ग्रामीण महिलाओं और लड़कियों ने, जिन्हें अपनी परंपरा पर नाज़ है. इनकी सफलता एक संदेश है. उनके लिए भी जो पर्दा प्रथा को महिला-विरोधी बताते है. विकास में बाधक समझते है.

शशि शेखर

राजस्थान अपनी परंपराओं और सांस्कृतिक विरासत के लिए विश्वविख्यात है. यह परंपरा और संस्कृति आज भी यहां की ग्रामीण महिलाओं एवं युवतियों की बदौलत ज़िंदा है, लेकिन ऐसा भी नहीं है कि पर्दा और परंपरा के आगे इनके सपनों का कोई मोल नहीं है. नवलगढ़ तहसील के एक गांव सिंहासन का ही उदाहरण लीजिए, मीनाक्षी कंवर नामक युवती घूंघट में तो है, लेकिन लैपटॉप पर उसकी उंगलियां बेहिचक चल रही हैं. हेडफोन पर एक किसान से बात करते हुए वह पूरा ब्योरा लैपटॉप पर दर्ज़ कर रही है. इस डाटा का इस्तेमाल किसानों को कृषि संबंधी जानकारी देने के लिए किया जाएगा. अब भला यह देखकर किसे अच्छा नहीं लगेगा. यही नहीं, ढाणी मझाओं गांव के नारायण सांझा रसोई केंद्र पर महिला सशक्तिकरण का असली मतलब समझा जा सकता है. वहां एक साथ 7–8 महिलाएं एलपीजी से जलने वाले चूल्हे पर खाना बना रही हैं. बिमला एक ग़रीब महिला है. वह रोज़ यहां आकर अपने परिवार के लिए खाना बनाती है. नवलगढ़ के वार्ड नंबर 24 में चल रहे स्वयं सहायता समूह यहां की ग़रीब महिलाओं को आर्थिक तौर पर मज़बूत बनाने का काम कर रहे हैं. प्रतिदिन की छोटी-मोटी बचत उनके लिए सुनहरे भविष्य की नींव तैयार कर रही है.

दरअसल, नवलगढ़ जहां एक ओर अपनी हवेलियों के लिए प्रसिद्ध है, वहीं दूसरी तरफ़ यहां मोरारका फाउंडेशन की ओर से चलाए जा रहे विभिन्न कार्यक्रमों का असर महिला सशक्तिकरण के रूप में भी दिख रहा है. बात चाहे वीर बालाओं की हो, सांझा रसोई केंद्र की हो या स्वयं सहायता समूह की. नवलगढ़ के बिरोल रोड स्थित हरिजन मुहल्ले की रहने वाली गुमानी देवी के परिवार की माली हालत बहुत ख़राब थी. फिर उसे फाउंडेशन की सहायता से चलाए जा रहे स्वयं सहायता समूह की जानकारी मिली. गुमानी देवी ने इस समूह से जुड़ने का फ़ैसला किया. उसने कुछ पैसा बचाना शुरू किया. तीन साल पहले गुमानी देवी ने समूह से दस हज़ार रुपये का क़र्ज़ लिया और अपने बेटे के लिए सब्जी एवं किराना की एक छोटी सी दुकान खोल ली. ख़ुद घरों में खाना बनाने का काम शुरू किया. दुकान और ख़ुद की कमाई से सबसे पहले क़र्ज़ चुकाया. बेटी को पढ़ाया-लिखाया. फिर 2009 में समूह से बीस हज़ार रुपये का क़र्ज़ लेकर बेटे के दुकान को और बढ़ाया. आज हालत यह है कि कभी दो वक़्त की रोटी के लिए तरसने वाले परिवार की माली हालत तो सुधरी ही, समाज में मान-सम्मान भी बढ़ गया. गुमानी देवी कहती है कि अगर मोरारका फाउंडेशन ने रास्ता न दिखाया होता तो हमें यह शहर छोड़कर कहीं बाहर जाना पड़ता.

यह कहानी तो एक ग़रीब महिला के आर्थिक तौर पर सशक्त होने की है. इसके अलावा नवलगढ़ युवतियों के सामाजिक सशक्तिकरण का भी गवाह बन रहा है. वह भी एक ऐसे समाज की युवतियों के लिए, जिसमें सदियों से चली आ रही पर्दा प्रथा आज भी उतनी ही मज़बूती से जारी है. नवलगढ़ के सिंहासन गांव में वीरबाला प्रोत्साहन प्रोजेक्ट के तहत राजपूत समाज की युवतियों को कंप्यूटर की ट्रेनिंग दी जा रही है. राजपूत समाज की युवतियां आमतौर पर घर से बाहर नहीं निकलतीं. ऊपर से पर्दा अलग. ऐसे में मोरारका फाउंडेशन ने इन युवतियों के लिए डाटा एंट्री की ट्रेनिंग शुरू की, वह भी उनके गांव में, उनके घर पर ही. इसके तहत युवतियों को कंप्यूटर हार्डवेयर और सॉफ्टवेयर के बारे में ट्रेनिंग दी गई. इसके बाद इन्हें जैविक खेती करने वाले किसानों की फार्म डायरी (इसमें किसानों द्वारा उत्पादित फसल की जानकारी होती है) के बारे में जानकारी देते हुए उसके रिकॉर्ड को कंप्यूटर में फीड करने की ट्रेनिंग दी गई. इन युवतियों को फाउंडेशन ने वीरबाला का नाम दिया. इन्हें काम करने के लिए कंप्यूटर भी दिया गया. प्रशिक्षण कार्यक्रम की देखरेख कर रहे फाउंडेशन के मुकेश गुप्ता बताते हैं कि इन युवतियों को ट्रेनिंग देना बहुत ही सुखद अनुभव रहा. मुकेश कहते हैं कि शहरी लड़कियों की अपेक्षा गांव की इन लड़कियों में समझ कहीं ज़्यादा है और ये अपने काम पर ज़्यादा ध्यान भी देती हैं. पिछले एक साल में इन वीरबालाओं ने डाटा एंट्री के काम को सफलतापूर्वक करते हुए न केवल अपनी आर्थिक स्थिति मज़बूत की, बल्कि अपनी कार्यक्षमता भी साबित कर दी. अब ये इंटरनेट का भी इस्तेमाल कर रही हैं. ये किसानों से फोन पर बात करती हैं और उनसे जुड़ी सूचनाएं एक जगह फीड करती हैं. बाद में इन सूचनाओं का इस्तेमाल उन्हीं किसानों के फ़ायदे के लिए किया जाता है. इस साल भी इस प्रोजेक्ट से क़रीब 12 युवतियां जुड़ी हैं.

महिला सशक्तिकरण की यह कहानी यहीं नहीं थमती. ग़रीब महिलाओं यानी जिनके पास अपनी ज़मीन नहीं है और जिनके लिए बरसात के दिनों में खाना बनाना किसी मुसीबत से कम नहीं होता, के लिए फाउंडेशन ने सांझा रसोई केंद्र की नींव रखी. इस केंद्र पर 4–5 परिवारों की महिलाएं एक साथ आकर खाना बनाती हैं. केंद्र पर एलपीजी रसोई गैस की व्यवस्था है. इस केंद्र से न सिर्फ़ महंगे ईंधन की समस्या का समाधान हुआ है, बल्कि गांव की कुछ महिलाओं को रोज़गार भी मिल गया है. एक महिला एक केंद्र चलाती है, जिससे उसे कुछ मासिक आमदनी हो जाती है. झुंझुनू एवं सीकर ज़िले के नवलगढ़, जांटवाली, तेतरा, कटराथल, बलवंतपुरा, मंझाऊ और सिंगनौर में फाउंडेशन ने सांझा रसोई गैस योजना के तहत एलपीजी गैस एवं चूल्हे वितरित किए. इससे गांव के ग़रीब परिवारों को बतौर ईंधन लकड़ी के इस्तेमाल से छुटकारा मिला और महिलाओं को धुएं से. ऐसे ही एक केंद्र नारायण सांझा गैस रसोई की मुखिया शरबती देवी बताती हैं कि इससे कम समय, कम लागत, कम परेशानी, कम श्रम के साथ खाना तैयार हो जाता है और आय भी हो रही है. अपनी कमाई का इस्तेमाल वह स्वयं सहायता समूह में बचत द्वारा अपना और अपने परिवार का भविष्य संवारने के लिए करती हैं.

shashishekhar@chauthiduniya.com

इन योजनाओं के बारे में अधिक जानकारी और सहायता के लिए संपर्क करें

वी.बी. बापना
महा प्रबंधक
मोरारका फाउंडेशन, वाटिका रोड, जयपुर-302015
मोबाइल-09414063458
ईमेल-vbmorarka@yahoo.com.

सांझा रसोई केंद्र पर खाना बनाती महिलाएं

अल्पसंख्यकों के कल्याण के मामले में आज भले ही राज्य का अल्पसंख्यक आयोग पीछे छूट गया हो, पर कभी मध्य प्रदेश राज्य अल्पसंख्यक आयोग पूरे देश में मॉडल बनकर उभरा था.

मेघनाद देसाई

भारतीय राजनीति में धर्म निरपेक्षता एक छलावा

प्रसिद्ध गीतकार जावेद अख्तर ने पिछले दिनों एक बड़े मार्के की बात कही. उन्होंने कहा कि एक मुसलमान होने के चलते वह कभी धर्म निरपेक्ष हो ही नहीं सकते. धर्म निरपेक्षता का मामला तो केवल हिंदुओं तक सीमित है, मुसलमान तो बस मुसलमान हैं. मेरे नज़रिए से उन्हें एक और बात इसमें जोड़ देनी चाहिए थी. उन्हें यह भी बताना चाहिए था कि आम लोगों को अपनी धर्म निरपेक्षता साबित करने की कोई ज़रूरत नहीं है, बल्कि यह काम तो राजनीतिक पार्टियों के नेताओं को करना चाहिए. इसकी वजह यह है कि धर्म निरपेक्षता अब विचारधारा की चीज नहीं रह गई, बल्कि वह स्वार्थ सिद्धि और अवसरवादिता तक सीमित होकर रह गई है.

अयोध्या मामले पर फ़ैसला आने के बाद भारतीय राजनीति की वास्तविक त्रासदी सतह पर आ गई. देश की आम जनता पर इसका कोई खास असर देखने को नहीं मिला. उसके लिए यह अदालत का एक फ़ैसला भर था और इसी रूप में उसने इसे स्वीकार भी किया. समस्या तो राजनीतिक पार्टियों के साथ है, जो इसके बाद से घबराई हुई हैं. इसकी वजह यह है कि आम लोगों के लिए धर्म कोई खास अहमियत नहीं रखता, इससे ज़्यादा महत्वपूर्ण रोज़ाना की ज़िंदगी से जुड़े अन्य मुद्दे हैं, लेकिन राजनीतिक दलों के लिए धर्म का मतलब वोट बैंक है. तथाकथित धर्म निरपेक्ष पार्टियां अपने रुख़ को लेकर असमंजस में हैं. वे यह नहीं तय कर पा रही हैं कि फ़ैसले को मुस्लिम हितों के ख़िलाफ़ घोषित करें या फिर ज़िम्मेदार संगठन का नज़रिया अपनाते हुए इसे सबको ख़ुश करने वाला बताएं. यहां मुद्दा धार्मिक आस्था या अदालत का फ़ैसला नहीं है, असली मुद्दा तो आगे होने वाले चुनाव हैं. सबसे बड़ी समस्या देश की सबसे पुरानी राजनीतिक पार्टी कांग्रेस के साथ है. इसमें अभी भी कई ऐसे लोग हैं, जो धर्म निरपेक्षता की नेहरूवादी विचारधारा के समर्थक हैं. उनके लिए राजनीति में धर्म के लिए कोई जगह नहीं है और इसकी कोई चर्चा तक उन्हें मंजूर नहीं. पार्टी का यह धड़ा सवाल खड़े कर रहा है कि जजों ने क़ानूनी मामले में हिंदुओं की धार्मिक आस्था को आधार बनाकर फ़ैसला

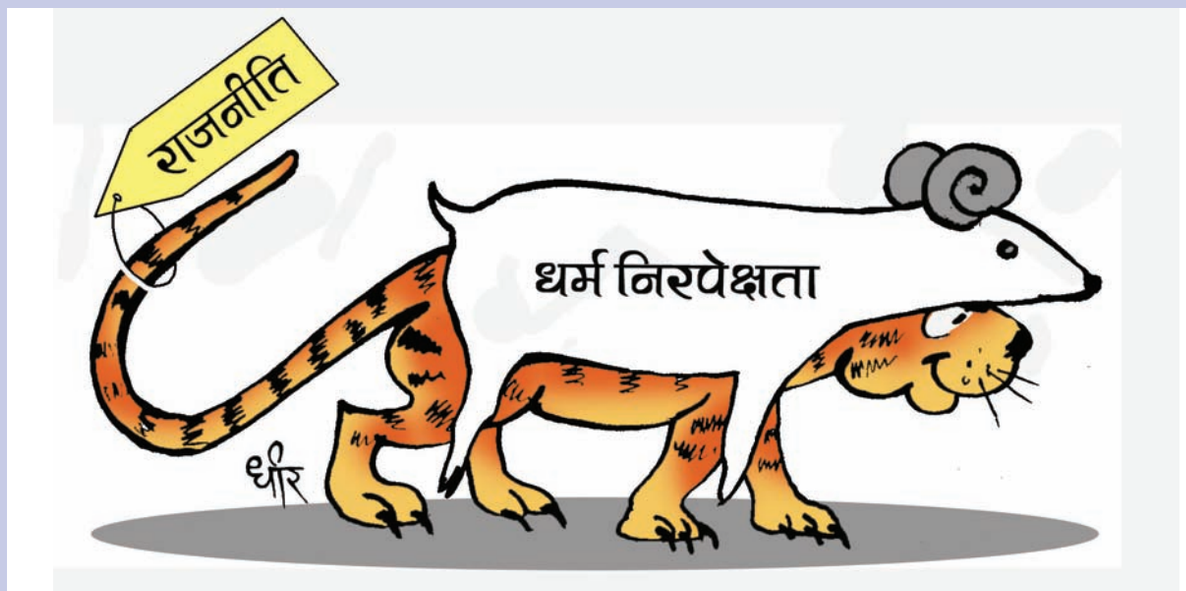

क्यों दिया? लेकिन यह विवाद तो तीन साल पहले यूपीए के पहले कार्यकाल में ही ख़त्म हो गया था, जब तत्कालीन क़ानून मंत्री ने राम सेतु मामले में सुप्रीम कोर्ट में यह माना था कि सरकार राम के अस्तित्व और उनके दैविक चरित्र को स्वीकार करती है. कांग्रेस पार्टी के अधिकतर सदस्य धर्म निरपेक्षता की दुहाई देते हैं, लेकिन इसका एकमात्र मक़सद मुस्लिम वोट बैंक को समाजवादी पार्टी और राष्ट्रीय जनता दल से दूर रखना है. नेहरू के जाने के बाद से धर्म निरपेक्षता के प्रति नज़रिए में काफी बदलाव आ चुका है. मुसलमानों की धार्मिक भावनाओं का सम्मान करना पहली प्राथमिकता बन गया. सलमान रश्दी के सैटेनिक वर्सेज को प्रतिबंधित कर दिया गया. डेनमार्क में बनाए गए पैगंबर मोहम्मद के कार्टूनों की भर्त्सना की गई.

कांग्रेस के तथाकथित धर्मनिरपेक्षवादियों ने उस समय यह नहीं कहा कि कुरान की कुछ आयतों की सच्चाई पर रश्दी ने जो सवाल उठाए हैं, उन्हें इतनी आसानी से ख़ारिज नहीं किया जा सकता. इस मुद्दे पर अभी भी बहस जारी है, खासकर मिस्र में. यह मानने में कोई हर्ज नहीं होना चाहिए कि पैगंबर मोहम्मद के अभिचित्रण को लेकर कुरान में कोई प्रतिबंध नहीं है. ऐसा हो भी नहीं सकता, क्योंकि कुरान में लिखे शब्द ख़ुद अल्लाह के ही हैं. हदीथ में केवल एक वाक्य ऐसा है, जिसे प्रतिबंध के समर्थन में उद्धृत किया जाता है, लेकिन शिया मुस्लिम इसे स्वीकार नहीं करते. पैगंबर के चित्रों वाले सिक्के उनकी मौत के पांच सौ साल बाद तक आसानी से उपलब्ध थे. फिर भी यदि प्रतिबंध की बात मान लेने से शांति बनी रहती है तो इसमें कोई बुराई नहीं है. लेकिन यदि ऐसा है तो हिंदुओं की धार्मिक आस्था की बातों, जैसा कि अयोध्या में राम के जन्म का मामला है, चाहे वह अतार्किक ही क्यों न हो, को मानने से परहेज क्यों? और यदि हम सामाजिक शांति बनाए रखने के नाम पर हर धार्मिक समुदाय के अतार्किक विश्वासों को मानने के लिए तैयार हैं तो फिर कांग्रेस और भाजपा के बीच फ़र्क़ क्या रह जाता है? धर्म निरपेक्षता का मतलब केवल मुस्लिम वोटों के लिए मची धमाचौकड़ी है या फिर यह सिद्धांत से जुड़ा मुद्दा है?

भारतीय जनता पार्टी के लिए भी लचीला रवैया अपनाना खासा मुश्किल काम है. अदालत का फ़ैसला आने के बाद पार्टी के नेताओं को मंदिर बनने की संभावना नज़र आने लगी तो वह फ़ैसले का गुणगान करने लगे. वे चाहते तो इसी तर्ज पर मस्जिद निर्माण का प्रस्ताव भी रख सकते थे, लेकिन विवेकशीलता के बजाय उन्होंने अपने हिंदू वोट बैंक को सुरक्षित रखने की रणनीति अपनाई. हाईकोर्ट की लखनऊ बेंच के इस फ़ैसले के बाद यदि देश की राजनीतिक पार्टियां धर्म निरपेक्षता के मुद्दे पर अपनी बचकाना लड़ाई को किनारे करने में कामयाब होती हैं, तभी भारतीय राजनीति की दशा और दिशा में किसी अच्छे बदलाव की उम्मीद की जा सकती है. विचारधारा के नाम पर इस फर्ज़ी विभाजन के पीछे काफी ऊर्जा ख़र्च हो रही है, जबकि एक सर्वसम्मत सरकार का होना आज समय की ज़रूरत बन चुका है. आर्थिक और सामरिक मामलों में चीन हमसे लगातार आगे निकलता जा रहा है. बाल्टिस्तान में नई संरचनाओं का निर्माण कर वह हमारे दरवाजे तक पहुंच चुका है, जबकि 62 साल बीत जाने के बावजूद हम आज तक कश्मीर में रेलवे नेटवर्क का निर्माण नहीं कर पाए हैं. पिछले कुछ सालों में चीन ने तेज गति वाले कई रेल ट्रैक बनाए हैं, लेकिन हम इस मामले में भी पीछे हैं. भारतीय राजनीति में विभाजन की शुरुआत 1989 में मंडल आयोग की सिफ़ारिशें लागू करने के बाद हुई. मंदिर–मस्जिद विवाद ने इस विभाजन को और गंभीर बना दिया, लेकिन अब वह समय आ चुका है कि हम इन विभाजनों को ख़त्म करें. आज ज़रूरत इस बात की है कि देश की बागडोर मज़बूत राजनीतिक पार्टियों के हाथों में हो.

feedback@chauthiduniya.com

अल्पसंख्यक आयोग के प्रति सरकारों की बेरुख़ी

ज़ाहिद ख़ान

मध्य प्रदेश राज्य अल्पसंख्यक आयोग के सभी काम अर्से से रुके पड़े हैं. शिक़ायतें और मामले दर्ज होना सभी कुछ बंद है. शिक़ायतें अगर दर्ज भी हो रही हैं तो उनका निराकरण वक़्त पर नहीं हो पा रहा है. शिक़ायती आवेदनपत्र तो किसी तरह जमा हो जाते हैं, लेकिन उनके निराकरण के लिए बेंच गठित करने और उन पर फ़ैसला लेने का काम फिलवक्त बंद है. स्थिति यह है कि अल्पसंख्यकों के कल्याण से जुड़ी योजनाओं के प्रस्ताव शासन को भेजने और उनकी समीक्षा का कार्य सूबे में लगभग ठप्प है. एक वजह आयोग का अध्यक्षविहीन होना भी है. आयोग के पिछले अध्यक्ष का कार्यकाल 23 अक्टूबर, 2008 को ख़त्म हो गया था. तबसे लेकर आज तक यह पद खाली पड़ा है. 2 साल होने वाले हैं, लेकिन राज्य की भाजपा सरकार को आयोग की बिल्कुल सुध नहीं है. राज्य अल्पसंख्यक आयोग शायद दूर तक उसकी प्राथमिकताओं में नहीं है.

मध्य प्रदेश राज्य अल्पसंख्यक आयोग अधिनियम 1996 के मुताबिक़, आयोग के चेयरमैन को ही मीटिंग बुलाने और आवेदनों पर निर्णय करने का अधिकार है. ज़ाहिर है, जब आयोग में चेयरमैन ही नहीं होगा तो कार्रवाई कौन करेगा? अध्यक्ष के अभाव में आयोग पूरी तरह पंगु बनकर रह गया है. नियमित समीक्षा न होने के कारण केंद्र सरकार की योजनाओं का फ़ायदा अल्पसंख्यकों को नहीं मिल पा रहा है, जबकि यह आयोग का ही दायित्व है कि वह सूबे के अल्पसंख्यकों के संवैधानिक अधिकारों के संरक्षण की पहल करे. मामला सिर्फ़ शिक़ायतों की दर्जगी और उनके निराकरण तक ही सीमित नहीं है, बीते तीन सालों में न तो आयोग का वार्षिक प्रतिवेदन बना है और न उसे विधानसभा के पटल पर रखा गया. मालूम हो कि आयोग हर साल 31 मार्च को समाप्त होने वाली अवधि का वार्षिक प्रतिवेदन राज्य सरकार के सामने पेश करता है, जिसे विधानसभा के पटल पर रखा जाता है. प्रतिवेदन में आयोग द्वारा साल भर के दौरान की गई गतिविधियों और कार्यकलापों का ब्योरा होता है. जब सूबे में आयोग किसी भी तरह सक्रिय नहीं है, न कोई गतिविधि, न कोई कार्य तो वार्षिक प्रतिवेदन किसका बनेगा और कैसे बनेगा, यह बात आसानी से समझी जा सकती है. अल्पसंख्यकों के कल्याण के मामले में आज भले ही राज्य का अल्पसंख्यक आयोग पीछे छूट गया हो, पर कभी मध्य प्रदेश राज्य अल्पसंख्यक आयोग पूरे देश में मॉडल बनकर उभरा

था. मुख्यमंत्री दिग्विजय सिंह के कार्यकाल के दौरान आयोग के आठ सूत्रीय अल्पसंख्यक कल्याण एजेंडे ने देश के अंदर मध्य प्रदेश की एक अलग पहचान बनाई थी. राज्य अल्पसंख्यक आयोग की अनुशंसा पर उस वक़्त राज्य सरकार ने कई अहम फ़ैसले लिए, जो आगे चलकर मील का पत्थर साबित हुए. मसलन मदरसा बोर्ड का गठन, अल्पसंख्यक कल्याण योजनाओं के लिए पृथक अल्पसंख्यक कल्याण विभाग की स्थापना, वक़्फ़ संपत्तियों के विवादों के निराकरण के लिए वक़्फ़ ट्रिब्यूनल की स्थापना, मदरसों को आधुनिक शिक्षा से जोड़ने के लिए मदरसा आधुनिकीकरण योजना, जैन समुदाय को राज्य में अल्पसंख्यक का दर्जा प्रदान करना, दंगा पीड़ितों के आश्रितों की शासकीय सेवाओं में भर्ती, अल्पसंख्यक शिक्षण संस्थाओं को नए स्कूल–कॉलेज खोलने के लिए नियमों में छूट, उर्दू भाषा की तरक़्क़ी के लिए उर्दू शिक्षकों के नए पदों को मंजूरी और नियुक्ति. यही नहीं, सेंट्रल वक़्फ़ एक्ट 1995 को अपने यहां लागू करने के मामले में भी मध्य प्रदेश सबसे अव्वल नंबर पर था.

केंद्र सरकार ने राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग के बाद जब देश के विभिन्न राज्यों में अल्पसंख्यक आयोगों का गठन किया तो उसके पीछे एकमात्र मक़सद अल्पसंख्यकों के हितों का संरक्षण, उनके साथ हो रही घटनाओं की निष्पक्ष जांच और उनसे जुड़ी सरकारी योजनाओं का प्रचार–प्रसार आदि था. सरकार अपने मक़सद में बहुत हद तक कामयाब भी रही, लेकिन कई राज्यों ने इसे गंभीरता से नहीं लिया. मौजूदा स्थिति यह है कि राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग द्वारा बार–बार कहने के बावजूद 13 राज्यों ने अपने यहां अभी तक अल्पसंख्यक आयोग गठित नहीं किया है. इनमें गुजरात, उड़ीसा और हरियाणा अव्वल नंबर पर है. जबकि गुजरात और उड़ीसा दो ऐसे राज्य हैं, जहां बीते एक दशक के दौरान अल्पसंख्यकों को काफी उत्पीड़न झेलना पड़ा, मगर अफसोस की बात यह है कि इस मामले में मोदी और नवीन पटनायक सरकारें कोई क़दम नहीं उठा रही हैं. महाराष्ट्र, तमिलनाडु और मणिपुर जैसे राज्यों ने अपने यहां अल्पसंख्यक आयोग तो गठित कर लिए, लेकिन उन्हें संवैधानिक अधिकारों से लैस नहीं किया. ज़ाहिर है, बिना संवैधानिक अधिकारों के उक्त आयोग महज़ सजावटी दरबार बनकर रह गए हैं.

हालांकि अल्पसंख्यक आयोग के ज़िम्मे अल्पसंख्यकों के ख़िलाफ़ किसी भेदभाव की वजह से पैदा होने वाली समस्याओं का अध्ययन, उन्हें दूर करने के लिए उपायों की सिफ़ारिश, राज्य सरकार द्वारा अल्पसंख्यकों के हितों की सुरक्षा के लिए प्रभावी उपायों की सिफ़ारिश, उनके सामाजिक, आर्थिक एवं शैक्षणिक विकास से संबंधित विषयों का अध्ययन, अनुसंधान और विश्लेषण करना आदि महत्वपूर्ण कार्य हैं, लेकिन आयोग में अल्पसंख्यकों से संबद्ध सभी समस्याएं–मामले आते रहते हैं. इंसाफ़ की आस में लोग अल्पसंख्यक आयोग के दरवाजे पर दस्तक देते रहते हैं. ज़ाहिर है, ऐसे में आयोग के अभाव में अल्पसंख्यकों को उपयुक्त फोरम में अपनी बात कहने का मौक़ा नहीं मिलता. मध्य प्रदेश में अध्यक्ष का पद खाली पड़ा है, इससे आयोग की समूची कार्यप्रणाली प्रभावित है. महाराष्ट्र, तमिलनाडु और मणिपुर में राज्य अल्पसंख्यक आयोग अधिकार विहीन हैं. नतीजतन इनका गठन जिन उद्देश्यों के लिए किया गया था, वे पूरे नहीं हो पा रहे हैं. अब आख़िरी उम्मीद केंद्र सरकार और प्रधानमंत्री से बंधती है कि वे इस मामले में जल्द से जल्द हस्तक्षेप करें, वरना इन राज्यों में अल्पसंख्यक आयोग के प्रति सरकारों की बेरुख़ी बदस्तूर जारी रहेगी.

(लेखक अल्पसंख्यक मामलों के जानकार हैं)

feedback@chauthiduniya.com

बिहार चुनाव पर उत्कृष्ट प्रस्तुति

चौथी दुनिया का 4–10 अक्टूबर का अंक मिला. बिहार विधानसभा चुनाव पर मनीष कुमार के विश्लेषणात्मक आलेख ने आंखें खोल दीं. इसमें अंदरखाने की वास्तविक तस्वीर पर बख़ूबी रोशनी डाली गई है. साथ ही विभिन्न राजनीतिक दलों को सत्ता प्राप्ति के लिए दी गईं बेहतरीन टिप्स उनके लिए फ़ायदेमंद साबित हो सकती हैं, लेकिन इसके साथ एक सच यह भी जुड़ा है कि सोते हुए शख़्स को जगाना आसान है, पर जगते हुए जगाना असंभव. सुना यह था कि कांग्रेस के होनहार युवा नेता राहुल गांधी एवं भाजपा के राष्ट्रीय अध्यक्ष नितिन गडकरी ने किसी निजी एजेंसी से बिहार की सभी विधानसभा सीटों का गुप्त सर्वेक्षण कराया था, लेकिन टिकट वितरण को लेकर मची उठापटक और मारामारी ने सर्वे की सच्चाई जगज़ाहिर कर दी. विभिन्न राजनीतिक दलों द्वारा अपने उम्मीदवारों के नामों की घोषणा में देरी से यह भी स्पष्ट हुआ कि सभी एक–दूसरे से डरे हुए थे. अगर जद–यू और भाजपा हाईकमान अपने कथित विकास के बलबूते जीत के प्रति आश्वस्त थे तो उन्हें बाहर से नेताओं के आयात की ज़रूरत न पड़ती. सच तो यह है कि राजग की बिहार शाइनिंग की मार्केटिंग पर कांग्रेस का काला साया मंडराता रहेगा. वहीं लालू–राबड़ी के 15 सालों के जंगलराज की वापसी का हौव्वा राजग के लिए कितना लाभकारी साबित होगा, यह तो भविष्य बताएगा. कांग्रेस के पक्ष में होने वाले मत विभाजन, कई पार्टी सांसदों द्वारा विभीषण की भूमिका में आने और ज़मीनी कार्यकर्ताओं की नाराज़गी के कारण नीतीश कुमार की राह इस बार आसान नहीं है. बिहार चुनाव सिर्फ़ नीतीश, लालू और राहुल की नहीं, यह राज्य की जनता के लिए भी अग्निपरीक्षा है. वह अगर फेल हुई तो पूरे 5 साल तक उसे भुगतना पड़ेगा.

–डॉ. सुशील कुमार गुप्त, *खगड़िया, बिहार.*

कॉमनवेल्थ खेलों की महिमा

कॉमनवेल्थ खेलों को हम पहले ऐरा–गैरा खेल आयोजन समझते थे, लेकिन जब ये हमारे देश आए तो पता चला कि इनकी महिमा सबसे न्यारी है. जबसे ये भारत आए हैं, इन्होंने हमारे सिस्टम को हिलाकर रख दिया है. अब देखिए न, जो मीडिया कल तक आईपीएल की माला जपता था, वह अब कॉमनवेल्थ खेलों की जय–जयकार कर रहा है और ईश्वर से प्रार्थना कर रहा है कि वह हर साल एक ऐसा ही आयोजन करा दे, जिससे कम से कम छह महीने तक कहीं और झांकने की आवश्यकता न पड़े. क्रिकेट बोर्ड की तो हालत ख़राब है. उसे डर है कि यदि ऐसे विशाल विश्व प्रसिद्ध (विवादित) आयोजन होते रहे तो इस देश से कहीं आईपीएल का बिस्तर ही न गोल हो जाए. जो पिता अपने बेटे–बेटी को खेलों की ट्रेनिंग के लिए जाते देख दोहरा हो जाता था, उसने अब साफ–साफ हिदायत दे दी है कि अगर खेलना है तो खेल मत खेलो, बल्कि खेलों से खेलना सीखो, क्योंकि उसमें नाम और दाम दोनों हैं. कॉमनवेल्थ खेलों की महिमा देखकर सरकारी अधिकारी नेताओं की चमचागिरी कर रहे हैं कि बस एक बार ऐसे आयोजन की किसी छोटी–मोटी समिति में उनकी गोटी फिट हो जाए तो वे भी गंगा नहा लें और थोड़ा पुण्य (माल) कमा लें. उधर नेता जी हंस तो रहे हैं, पर अंदर ही अंदर तंदूर की तरह सुलगे हुए हैं. उन्हें अफसोस है कि वह आयोजन समिति में आख़िर क्यों नहीं थे. अगर एक बार समिति में घुस जाते तो जीवन में फिर कभी कोई घोटाला करने की आवश्यकता न होती. लेकिन नेता जी अच्छी तरह जानते हैं कि अब अफसोस करने से क्या फ़ायदा, जब सारे बाज चिड़िया बनकर खेत चुग गए. अब तो शरीफ बनकर इन घोटालों के ख़िलाफ़ ही आवाज़ उठानी चाहिए. भले ही कुछ न हो, लेकिन कम से कम दिल को तसल्ली तो मिल ही जाएगी. कॉमनवेल्थ खेलों की महिमा का सार यह है कि जो खेत चुग गया, वह आपका था और आप कुछ नहीं कर सकते. सिर्फ़ खड़े होकर ताली बजाते हुए इतना ही कह सकते हैं कि वाह, क्या खेल है!

–अरुण गौड़, *हापुड़, उत्तर प्रदेश.*

गाजापट्टी बनता कश्मीर

अब तक की केंद्रीय सरकारें कश्मीर मामले में लगातार ग़लतियां करती रही हैं. गृहमंत्री चिदंबरम ने विदेशी ताक़तों के दबाव में गुपचुप ढंग से अलगाववादियों से वार्ता करके उनका हौसला बढ़ाया. जॉर्ज बुश के भारत आगमन पर थलसेना अध्यक्ष की चेतावनी के बावजूद संवेदनशील मोर्चे से सेना हटाई गई. इसके अलावा 26/11 की घटना को सुरक्षा परिषद में ले जाकर नेहरू की ग़लती दोहराई गई.

–नित्यानंद सिंह, *अधिवक्ता, धनबाद, झारखंड.*

रिक्शा बंद क्यों हो?

ग़रीब आदमी का जीवन बहुत कठिन होता है. रिक्शा चलाकर ये लोग दो जून की रोटी का जुगाड़ बड़ी मुश्किल से कर पाते हैं. इसलिए रिक्शा बंद करना अक्लमंदी का काम नहीं है. आज हर तरफ़ प्रदूषण की मार है, ऐसे में इन प्रदूषण रहित वाहनों पर रोक का कोई औचित्य समझ में नहीं आता.

–सुनीता शर्मा खत्री, *स्वतंत्र पत्रकार.*

केंद्र सरकार ज़िम्मेदार

बरौनी, बिहार स्थित हिंदुस्तान फर्टिलाइज़र कारखाना केंद्र सरकार का है और राज्य सरकार इसे चालू नहीं कर सकती. रामविलास पासवान जब केंद्र में मंत्री थे तो उन्होंने पहल की थी. अगर अब तक यह कारखाना नहीं खुल सका है तो इसकी वजह जानने के लिए सवाल नीतीश कुमार से नहीं, रामविलास पासवान से पूछे जाने चाहिए.

–आशीष झा, *नई दिल्ली.*

आप अपने स्वतंत्र विचार तथा प्रतिक्रियाएं हमें इसी पते पर भेजें.
संपादक, चौथी दुनिया, एफ-2, सेक्टर-11 नोएडा, (उत्तर प्रदेश) पिन-201301
ई-मेल पता : feedback@chauthiduniya.com

एक कातिल को मौत की सज़ा सुनाई जाती है. वह भले ही इस निर्णय से असहमत हो, परंतु उसे निर्णय को हर हालत में स्वीकार करना होगा.

जब तोप मुक़ाबिल हो

संतोष भारतीय

यह बिहार की जनता की अग्निपरीक्षा है

बिहार चुनाव सिर्फ़ नीतीश कुमार, लालू यादव और रामविलास पासवान के लिए नहीं, बल्कि राज्य के लोगों के लिए भी एक अग्निपरीक्षा है. बिहार के लोगों को अब यह तय करना है कि अगली विधानसभा में उनका प्रतिनिधित्व कौन लोग करेंगे, ज़मीनी स्तर पर काम करने वाले सामाजिक एवं राजनीतिक कार्यकर्ता या फिर पैसे वाले? पढ़े-लिखे लोगों को विधानसभा भेजा जाएगा या फिर गुंडे और आपराधिक छवि वाले लोग चुनाव जीतेंगे? बिहार की जनता के सामने ऐसे कई सवाल हैं, जिनका जवाब उसे देना है. क्या इस बार चुनकर आए विधायकों पर यह भरोसा किया जा सकता है कि वे अगले पांच सालों तक राज्य के लोगों की समस्याओं को दूर करने का दायित्व निभा पाएंगे? प्रजातंत्र को मज़बूत करने और उसे चलाने की ज़िम्मेदारी राजनीतिक दलों पर होती है, लेकिन बिहार विधानसभा चुनाव में जिस तरह के उम्मीदवारों को टिकट दिया जा रहा है, उससे लोगों का विश्वास उठता जा रहा है.

चुनाव जीतने के लिए हर पार्टी ने अपराधियों और समाज में ख़राब छवि वाले लोगों को टिकट दिया है. ऐसे लोगों को टिकट दिया जा रहा है, जो पैसा ख़र्च कर सकते हैं, जिनके पास विरोधियों को हराने का बाहुबल है. और जो सही लोग हैं, ज़मीन से जुड़े हैं, जिन्होंने सालोंसाल अपना ख़ून-पसीना एक करके अपनी पार्टी को मज़बूत बनाया है, उसे खड़ा किया है, उन्हें अनदेखा कर दिया गया. यही वजह है कि हर पार्टी को अपने प्रतिद्वंद्वियों से ज़्यादा अपने बाग़ियों से ख़तरा पैदा हो गया है. अफ़सोस की बात यह है कि जनता के किसी भी बुनियादी सवाल और सामाजिक-आर्थिक मुद्दों का असर इस चुनाव में नहीं दिख रहा है. हर राजनीतिक दल का ध्यान सिर्फ़ और सिर्फ़ चुनाव जीतने के समीकरणों पर है. अशिक्षा, बेरोज़गारी, बीमारी और भुखमरी जैसी समस्याओं पर किसी का ध्यान नहीं है. विभिन्न राजनीतिक दलों से यह सवाल किया जाना चाहिए कि पिछले पांच सालों के दौरान राज्य विधानसभा में कितनी बार स्वास्थ्य, शिक्षा, बेरोज़गारी और महंगाई जैसे सवालों पर बहस हुई? जो उम्मीदवार चुनाव लड़ रहे हैं, क्या वे इन मुद्दों को गंभीरता से उठाने की क़ाबिलियत रखते हैं? इस सवाल पर भी ग़ौर किया जाना चाहिए.

बिहार की राजनीति में एक नया ट्रेंड चल पड़ा है भाई-भतीजावाद का. हर राजनीतिक दल में नेता अपने बेटे-बेटियों, बहुओं या रिश्तेदारों को टिकट देने-दिलाने में जुटे हैं. सिर्फ़ छोटे ही नहीं, बड़े नेताओं के बीच भी ऐसी होड़ चल रही है. परिवारवाद का हर पार्टी में बोलबाला है. भारतीय जनता पार्टी के प्रदेश अध्यक्ष सी पी ठाकुर ने अपने पद से इसलिए इस्तीफ़ा दे दिया, क्योंकि उनके बेटे को पार्टी ने टिकट नहीं दिया. जब उपचुनाव हुए थे तो नीतीश कुमार सत्रह में सिर्फ़ पांच सीटें ही जीत पाए थे. वैसे उनकी इस बात के लिए तारीफ़ होनी चाहिए कि तब उन्होंने सांसदों और विधायकों के रिश्तेदारों को टिकट नहीं दिया था. अब जब पूरे राज्य में चुनाव हो रहे हैं तो वह वैसा साहस नहीं दिखा सके.

राज्य के मुसलमान मतदाताओं के सामने भी चुनौती है. एक तरफ़ लालू यादव और रामविलास पासवान हैं, जिन्हें अब तक अल्पसंख्यकों का समर्थन मिलता आया है. दूसरी तरफ़ नीतीश कुमार और भारतीय जनता पार्टी है, जो उन्हें लुभाने के लिए हरसंभव प्रयास कर रहे हैं. इसके अलावा कांग्रेस भी है, जो राज्य में संगठन की बागडोर एक मुस्लिम को सौंपकर मुसलमानों को वापस अपने खेमे में लाना चाहती है. बाबरी मस्जिद के मामले में इलाहाबाद हाईकोर्ट का फ़ैसला मुसलमानों के ख़िलाफ़ गया है. अच्छी बात यह है कि देश की जनता ने एक परिपक्व प्रतिक्रिया दी और सांप्रदायिक संगठनों की कोशिशों के बावजूद पूरा देश शांत रहा. मुसलमानों की सुरक्षा के अलावा एक और सच यह है कि देश के दूसरे राज्यों के मुक़ाबले बिहार के मुसलमानों की हालत सबसे ज़्यादा ख़राब है. बिहार के मुसलमान सबसे ज़्यादा ग़रीब हैं. वे भी यही चाहते हैं कि उनके बच्चों को शिक्षा मिले, नौकरी मिले और समाज में उन्हें बराबरी का दर्जा मिले. भागलपुर दंगा जैसी घटनाएं फिर से न हों, यह भी हर मुस्लिम मतदाता सोचता है. ग़रीबी, बेरोज़गारी, अशिक्षा और असुरक्षा के माहौल में मुसलमानों को इस चुनाव में फ़ैसला लेना है. बिहार में चुनावों के दौरान मुस्लिम वोटों के ठेकेदार पैसा ले लेते हैं, जो हर पार्टी से सौदा करते हैं. मुसलमानों को वोटों के इन दलालों से बचना होगा, क्योंकि इन्हीं लोगों की वजह से चुनाव के बाद मुसलमानों से जुड़े मुद्दे ग़ायब हो जाते हैं. मुसलमानों की संख्या बिहार में अच्छी-ख़ासी है. वे क़रीब पचास सीटों पर निर्णायक भूमिका में हैं, लेकिन उनकी समस्याओं को उठाने वाला सही आदमी चुनाव नहीं जीत पाता है. इसलिए ज़रूरी यह है कि उन उम्मीदवारों को वोट देना चाहिए, जो मुसलमानों के मुद्दों को उठा सकें, उनका समाधान निकाल सकें. चाहे वे किसी भी पार्टी के हो.

बिहार के चुनाव कुछ मायनों में बिल्कुल अलग होते हैं. यहां चुनाव में बाहुबल और धन का ज़बरदस्त इस्तेमाल होता है. चुनाव पर जाति का असर सबसे ज़्यादा देखा जाता है. उम्मीदवार चुनने से लेकर नतीजा आने तक चुनाव जाति के रंग में सराबोर रहता है. पोलिंग बूथ पर क़ब्ज़ा करने या उन्हें लूटने की घटनाएं आम बात हैं. चुनाव आयोग के लिए बिहार में चुनाव कराना कश्मीर से ज़्यादा परेशानी का सबब है.

बिहार के चुनाव कुछ मायनों में बिल्कुल अलग होते हैं. यहां चुनाव में बाहुबल और धन का ज़बरदस्त इस्तेमाल होता है. चुनाव पर जाति का असर सबसे ज़्यादा देखा जाता है. उम्मीदवार चुनने से लेकर नतीजा आने तक चुनाव जाति के रंग में सराबोर रहता है. पोलिंग बूथ पर क़ब्ज़ा करने या उन्हें लूटने की घटनाएं आम बात हैं. चुनाव आयोग के लिए बिहार में चुनाव कराना कश्मीर से ज़्यादा परेशानी का सबब है. आजकल राजनीतिक दल गांवों में शराब बांटने लगे हैं, उनके उम्मीदवार खुलेआम पैसे बांटते देखे जा रहे हैं. लोगों को इस प्रवृत्ति के ख़िलाफ़ खड़ा होना चाहिए, अन्यथा बिहार में लोकतंत्र दलाल तंत्र, कट्टा तंत्र और राइफल तंत्र में बदल जाएगा. बिहार के लोगों को यह समझना होगा कि एक जवाबदेह सरकार बनाने की ज़िम्मेदारी खुद उनकी है. इसलिए वोट देते वक़्त उन्हें यह याद रखना ज़रूरी है कि यदि अच्छे लोग नहीं चुने गए तो उनका अपना भविष्य अंधकारमय हो जाएगा. अगर अभी नहीं चेते तो फिर चेतने का कोई मतलब नहीं होगा. बिहार के लोगों से हम यही आशा करते हैं कि वे पार्टियों के दायरे से ऊपर उठकर उन्हें चुनेंगे, जिनमें समझदारी होगी, जिनमें ज्ञान होगा, जिनमें देशप्रेम होगा और जो लोकतंत्र के प्रति समर्पण होंगे.

संपादक
editor@chauthiduniya.com

इलाहाबाद हाईकोर्ट का निर्णय

ग़ैर वैज्ञानिक सोच और अंधविश्वास को बढ़ावा

भारत का संविधान लागू होने के बाद से आज तक न्यायपालिका के किसी निर्णय पर शायद ही इतनी परस्पर विरोधी प्रतिक्रियाएं हुई हों, जितनी हाल में इलाहाबाद उच्च न्यायालय की लखनऊ बेंच द्वारा अयोध्या मामले में दिए गए निर्णय पर हुईं. जहां अनेक लोग निर्णय का स्वागत कर रहे हैं, वहीं ऐसे लोगों की संख्या भी कम नहीं है, जो उसे ग़लत ठहरा रहे हैं. सारा देश सांस रोककर इस निर्णय की प्रतीक्षा कर रहा था. पहले इलाहाबाद हाईकोर्ट इस निर्णय की घोषणा 24 सितंबर को करने वाला था, परंतु इस बीच सुप्रीमकोर्ट ने निर्णय की घोषणा पर रोक लगा दी और अंतत: यह निर्णय 30 सितंबर को सुनाया गया. 24 और 30 सितंबर को पूरे देश में जिस पैमाने पर सुरक्षा व्यवस्था की गई, वह अभूतपूर्व थी. क्या हम इतने असहिष्णु एवं अनुशासनहीन हैं कि न्यायपालिका के निर्णय को भी नहीं पचा सकते? हमारी संवैधानिक व्यवस्था के अनुसार हम संसद के फ़ैसलों से असहमत हो सकते हैं, हम कार्यपालिका के निर्णयों से भी असहमत हो सकते हैं और उन्हें अस्वीकार कर सकते हैं, परंतु न्यायपालिका के किसी निर्णय से भले ही हम असहमत हों, लेकिन हमें उसे स्वीकार करना ही होता है. एक कातिल को मौत की सज़ा सुनाई जाती है. वह भले ही इस निर्णय से असहमत हो, परंतु उसे निर्णय को हर हालत में स्वीकार करना होगा.

बड़े पैमाने पर सुरक्षा व्यवस्था का एक कारण यह संदेह था कि शायद समाज का एक हिस्सा न सिर्फ़ निर्णय को अस्वीकार कर देगा, वरन् अपना आक्रोश प्रगट करने के लिए हिंसा का सहारा लेगा. यदि ऐसी स्थिति बनती तो उस पर नियंत्रण पाने के लिए कड़ी सुरक्षा व्यवस्था की गई थी. इसका अर्थ बहुत साफ है. यह कि जहां एक व्यक्ति असहमत होते हुए भी न्यायालय के निर्णय को स्वीकार कर लेता है, परंतु समाज ऐसा नहीं करता. यह इस बात का परिचायक है कि आज़ादी हासिल होने के 63 वर्षों बाद भी हम एक परिपक्व राष्ट्र नहीं बन सके हैं. निर्णय के दिन सुरक्षा की इतनी ज़बरदस्त व्यवस्था थी कि यह उम्मीद करना स्वाभाविक था कि लोग बिना डरे अपनी दैनिक गतिविधियां चालू रखेंगे, परंतु ऐसा नहीं हुआ. 30 सितंबर को व्यापारियों ने दुकानें बंद कर लीं, दोपहर बाद सरकारी कार्यालय सूने हो गए, अधिकांश स्कूलों में छुट्टी घोषित कर दी गई और लोग अपने घरों से नहीं निकले. सड़कों पर बच्चे क्रिकेट खेल रहे थे और पतंग उड़ा रहे थे. यहां तक कि अस्पतालों में मरीज नहीं आए और डॉक्टरों एवं नर्सों की उपस्थिति भी कम रही. अदालतें भी सूनी रहीं. यह स्थिति क्या इस बात की परिचायक नहीं है कि आम लोगों को सरकार और उसके द्वारा किए गए सुरक्षा बंदोबस्त पर भरोसा नहीं है? उन्हें यह विश्वास नहीं है कि कोई अप्रिय घटना होने पर पुलिस उनकी रक्षा कर पाएगी.

आमजनों को यह आशंका थी कि यदि कहीं भीड़ एकत्र हो जाएगी तो पुलिस उसके सामने आत्मसमर्पण कर देगी. आम जनता और शासन के बीच अविश्वास की यह खाई चिंताजनक है. जहां तक न्यायपालिका का सवाल है तो पिछले कुछ वर्षों में उसकी प्रतिष्ठा में भारी गिरावट आई है. न्यायपालिका पर पक्षपात और भ्रष्टाचार के आरोप आएदिन लगते रहते हैं. कुछ न्यायाधीशों को भ्रष्ट आचरण के कारण बर्खास्त भी किया गया. इस निर्णय के संदर्भ में कुछ लोगों का यह मानना है कि यह न्यायिक निर्णय नहीं, वरन् न्यायपालिका द्वारा सभी का तुष्टीकरण करने की कोशिश है. कुछ लोग यह भी मानते हैं कि निर्णय करते समय संविधान के मूलभूत सिद्धांतों की उपेक्षा की गई. संविधान में निहित प्रावधानों के अनुसार, आम लोगों में वैज्ञानिक

सोच को बढ़ावा देने का उत्तरदायित्व राज्य को सौंपा गया है और न्यायपालिका भी राज्य का हिस्सा है. आज भी हमारे देश की एक बहुत बड़ी आबादी अंधविश्वास के दलदल में फंसी हुई है. अंधविश्वास के कारण आज भी गांवों में किसी भी औरत को टोहनी-डायन बताकर इस संदेह में मार डाला जाता है कि उसके कारण गांव पर कोई विपत्ति आ सकती है. यह दु:ख की बात है कि इलाहाबाद हाईकोर्ट ने यह कहा कि विवादित स्थल ही राम की जन्मभूमि है. अदालत ने यह बात इस आधार पर कही कि हिंदुओं की आस्था के अनुसार राम का जन्म ठीक उसी स्थल पर हुआ था. पहली बात तो यह है कि सभी हिंदू यह नहीं मानते कि राम वहीं पैदा हुए थे. इसलिए अदालत ज़्यादा से ज़्यादा यह कह सकती थी कि कुछ हिंदुओं की आस्था के अनुसार राम वहीं पैदा हुए थे. इसके अतिरिक्त अदालत को यह भी कहना था कि यह मात्र आस्था है, जिसका कोई तर्कसंगत आधार नहीं है. सदियों पूर्व घटी किसी घटना के संबंध में कोई भी बात पूरे विश्वास के साथ नहीं कही जा सकती.

फिर यह भी तय किया जाना है कि राम भगवान थे या इंसान. यदि वह भगवान थे तो भगवान न तो पैदा होते हैं और न मरते हैं. यदि संघ परिवार या अन्य कोई हिंदू संगठन राम को भगवान मानता है तो उनके जन्म का कोई प्रश्न ही नहीं उठता. और यदि उन्हें इंसान माना जाता है तो वह सदियों पहले पैदा हुए होंगे. हमने यह माना है कि वह कलयुग में पैदा नहीं हुए थे. हिंदू मान्यता के अनुसार, कलयुग को प्रारंभ हुए भी हज़ारों वर्ष बीत चुके हैं. पिछले कुछ हज़ार वर्षों में पृथ्वी में अनेक भौगोलिक परिवर्तन हुए हैं. उन परिवर्तनों के कारण अनेक महल, अनेक किले, बल्कि पूरे-पूरे शहर तक धराशायी होकर धरती के गर्भ में समा गए होंगे. इसलिए यह कहना कि राम किसी स्थल विशेष पर पैदा हुए थे, अत्यधिक ग़ैर वैज्ञानिक और अतार्किक है.

फिर राम का जन्मस्थल या तो घर रहा होगा या महल. उस समय अस्पताल तो थे नहीं. इस तरह राम के जन्मस्थल पर महल होना था, न कि मंदिर. वैसे भी अयोध्या के सभी मंदिरों के पुजारी दावा करते हैं कि राम उन्हीं के मंदिर में पैदा हुए थे. जब अयोध्या के हमारे पत्रकार मित्र शीतला सिंह ने राम जन्मभूमि न्यास के अध्यक्ष से जानना चाहा कि आप किस आधार पर दावा करते हैं कि राम यहीं पैदा हुए थे तो उन्होंने फरमाया कि यदि राम स्वयं प्रकट होकर कहें कि वह यहां पैदा नहीं हुए थे तो भी हम उनकी बात नहीं मानेंगे और यह दावा करते रहेंगे कि राम की जन्मस्थली यही है. इस तरह के दावों से ही यह सिद्ध हो जाता है कि राम की जन्मभूमि का दावा किस हद तक ग़ैर वैज्ञानिक चिंतन पर आधारित है. किसी भी तार्किक सोच वाले व्यक्ति के लिए यह स्वीकार करना कठिन है कि राम की जन्मस्थली विवादित स्थल पर ही है. अब विचारणीय प्रश्न यह है कि क्या वहां राम मंदिर था? हाईकोर्ट ने इस बात को माना है कि वहां राम मंदिर था और यह भी कि बाबरी मस्जिद राम मंदिर के ऊपर बनी थी. अदालत का यह मत भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण (एएसआई) द्वारा की गई खुदाई पर आधारित है.

अदालत के इस निष्कर्ष को देश के अनेक इतिहासकारों ने चुनौती दी है. उनका कहना है कि खुदाई के दौरान वहां पशुओं की हड्डियां पाई गईं. इसके अतिरिक्त सुरखी और चूने का मिलना वहां मस्जिद की उपस्थिति का संकेत देता है. खुदाई में जो अन्य चीजें मिली थीं, उनका परीक्षण इतिहासकारों एवं पुरातत्व विशेषज्ञों से कराया जाना चाहिए, ताकि सही तथ्य सामने आ सकें. जिन इतिहासकारों ने इस आशय का बयान जारी किया है, उनमें रोमिला थापर, के एम श्रीमाली, के एन पन्नीकर, इरफान हबीब, उत्स पटनायक एवं सी पी चंद्रशेखर आदि शामिल हैं. ये सभी अपने-अपने क्षेत्रों के विशेषज्ञ हैं, इसलिए इनकी राय की उपेक्षा नहीं की जा सकती. वैसे विभिन्न अख़बारों ने निर्णय पर भिन्न-भिन्न टिप्पणियां की हैं, परंतु इकनॉमिक टाइम्स ने इसे ग़ैर न्यायिक निर्णय कहा है. अख़बार का कहना है कि निर्णय से न तो क़ानूनी स्थिति साफ हुई है और न ही समझौते का रास्ता प्रशस्त हुआ है. यह निर्विवाद है कि इस निर्णय से तनाव की स्थिति उत्पन्न नहीं हुई. यही एकमात्र संतोष की बात है, परंतु क्या यह शांति आगे भी बनी रहेगी, इस प्रश्न का उत्तर देना अभी संभव नहीं है.

एल एस हरदेनिया
feedback@chauthiduniya.com
(लेखक वरिष्ठ पत्रकार हैं)

आपराधिक पृष्ठभूमि वाले बेनेट ने अदालत को बताया कि जब वह भाग रहा था तो तीन लोगों ने उसका पीछा किया और पकड़ने के बाद उसे बांधकर मारा-पीटा.

सूचना का अधिकार — जानने का अधिकार जीने का अधिकार — चौथी दुनिया की पहल

कहां कितना आरटीआई शुल्क

सूचना अधिकार क़ानून के तहत आवेदन शुल्क या अपील या फोटो कॉपी शुल्क कितना होगा, यह तय करने का अधिकार राज्य सरकार को दिया गया है. मतलब यह कि राज्य सरकार अपनी मर्ज़ी से यह शुल्क तय कर सकती है. यही कारण है कि विभिन्न राज्यों में सूचना शुल्क/अपील शुल्क का प्रारूप अलग-अलग है. इस अंक में हम आपको आरटीआई शुल्क और सूचना के बदले लिए जाने वाले शुल्क के बारे में बता रहे हैं. हम इस अंक में एक टेबल भी प्रकाशित कर रहे हैं, जिसमें देश के सभी राज्यों में तय किए गए शुल्क की जानकारी है. इसके अलावा हम आपको यह भी बता रहे हैं कि अगर कभी आपसे कोई लोक सूचना अधिकारी सूचना के बदले ज़्यादा पैसे मांगे तो क्या करना चाहिए. सूचना क़ानून की धारा 7 में सूचना के एवज में शुल्क निर्धारण के बारे में बताया गया है, लेकिन इसी धारा की उपधारा 1 में कहा गया है कि यह शुल्क सरकार द्वारा निर्धारित किया जाएगा. इस व्यवस्था के तहत सरकारों को यह अधिकार दिया गया है कि वे अपने विभिन्न विभागों में सूचना अधिकार क़ानून के तहत अदा किए जाने वाले शुल्क स्वयं तय करेंगी. केंद्र और राज्य सरकारों ने इस अधिकार के तहत अपने यहां अलग-अलग शुल्क नियमावली बनाई है और उसमें स्पष्ट किया गया है कि आवेदन करने और सूचना से संबंधित फोटोकॉपी लेने के लिए कितना शुल्क लिया जाएगा. धारा 7 की उपधारा 3 में लोक सूचना अधिकारी की ज़िम्मेदारी का विवरण है कि वह सरकार द्वारा तय किए गए शुल्क के आधार पर गणना करते हुए आवेदक को बताएगा कि उसे अमुक सूचना पाने के लिए कितना शुल्क देना होगा. उपधारा 3 में लिखा है कि यह शुल्क वही होगा, जो उपधारा 1 में सरकार द्वारा तय किया गया होगा. केंद्र सरकार और विभिन्न राज्य सरकारों की शुल्क नियमावली में अंतर है. कहीं आवेदन के लिए शुल्क 10 रुपये है तो कहीं 50 रुपये. इसी तरह दस्तावेजों की फोटोकॉपी के लिए कहीं 2 रुपये तो कहीं 5 रुपये लिए जाते हैं. दस्तावेज़ों के निरीक्षण, काम के निरीक्षण एवं सीडी- फ्लॉपी पर सूचना लेने के लिए भी शुल्क इन नियमावलियों में बताया गया है. उम्मीद है कि हमारे पाठकों के लिए यह जानकारी काफी मददगार साबित होगी और वे जमकर आरटीआई क़ानून का इस्तेमाल करते रहेंगे.

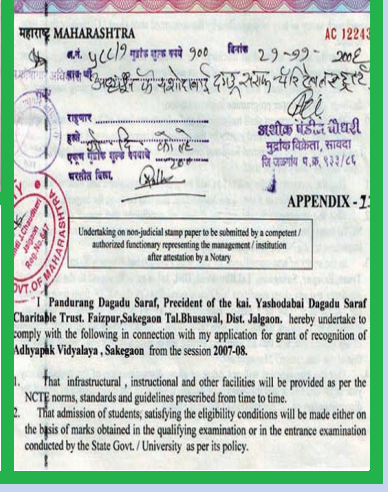

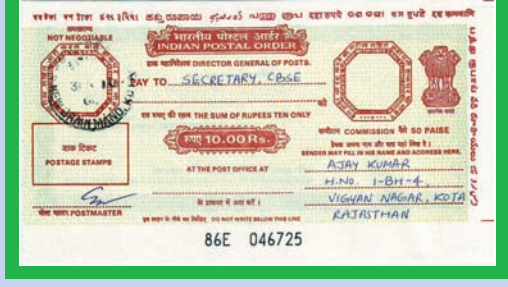

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

यदि आपने सूचना क़ानून का इस्तेमाल किया है और अगर कोई सूचना आपके पास है, जिसे आप हमारे साथ बांटना चाहते हैं तो हमें वह सूचना निम्न पते पर भेजें. हम उसे प्रकाशित करेंगे. इसके अलावा सूचना का अधिकार क़ानून से संबंधित किसी भी सुझाव या परामर्श के लिए आप हमें ईमेल कर सकते हैं या हमें पत्र लिख सकते हैं.
हमारा पता है :

चौथी दुनिया
एफ-2, सेक्टर-11, नोएडा (गौतमबुद्ध नगर) उत्तर प्रदेश, पिन -201301
ई-मेल : rti@chauthiduniya.com

विभिन्न राज्यों के नियम (आवेदन/अपील/फोटोकॉपी शुल्क)

राज्य	आवेदन शुल्क	शुल्क का प्रारूप	फोटो कॉपी शुल्क	अपील शुल्क
केंद्र सरकार/दिल्ली सरकार	10 रुपये	नकद/डिमांड ड्राफ्ट/बैंकर्स चेक/पोस्टल ऑर्डर	2 रुपये प्रति पेज	नहीं
आंध्र प्रदेश	ग्राम स्तर-शुल्क नहीं मंडल स्तर- 5 रुपये, अन्य जगहों पर 10 रुपये	नकद/डिमांड ड्राफ्ट/नॉन ज्यूडिसियल स्टांप/ ट्रेजरी चालान	2 रुपये प्रति पेज	नहीं
अरुणाचल प्रदेश	कोई शुल्क नहीं	ट्रेजरी चालान	2 रुपये प्रति पेज	प्रथम/द्वितीय 50 रुपये
असम	10 रुपये	नकद/डिमांड ड्राफ्ट/बैंकर्स चेक/पोस्टल ऑर्डर	2 रुपये प्रति पेज	नहीं
बिहार	10 रुपये	नकद/पोस्टल ऑर्डर/नॉन ज्यूडिसियल स्टांप/ डिमांड ड्राफ्ट/बैंकर्स चेक	2 रुपये प्रति पेज	प्रथम/द्वितीय 10 रुपये
छत्तीसगढ़	10 रुपये	नकद/ट्रेजरी चालान/नॉन ज्यूडिसियल स्टांप	2 रुपये प्रति पेज	नहीं
गोवा	10 रुपये	कोर्ट फी स्टांप	2 रुपये प्रति पेज	नहीं
गुजरात	20 रुपये	नकद/डिमांड ड्राफ्ट/पे ऑर्डर/नॉन ज्यूडिसियल स्टांप	2 रुपये प्रति पेज	नहीं
हरियाणा	50 रुपये	नकद/ट्रेजरी चालान/पोस्टल ऑर्डर	2 रुपये प्रति पेज	नहीं
हिमाचल प्रदेश	10 रुपये	नकद/डिमांड ड्राफ्ट/ट्रेजरी चालान/पोस्टल ऑर्डर	10 रुपये प्रति पेज	नहीं
झारखंड	10 रुपये	नकद/डिमांड ड्राफ्ट/बैंकर्स चेक/पोस्टल ऑर्डर	2 रुपये पेज	नहीं
कर्नाटक	10 रुपये	नकद/डिमांड ड्राफ्ट/बैंकर्स चेक/पोस्टल ऑर्डर/ पे ऑर्डर	2 रुपये पेज	नहीं
केरल	10 रुपये	कोर्ट फी स्टांप	2 रुपये प्रति पेज	नहीं
मध्य प्रदेश	10 रुपये	नकद/नॉन ज्यूडिसियल स्टांप	2 रुपये प्रति पेज	प्रथम 50 रुपये/ द्वितीय 100 रुपये
महाराष्ट्र	10 रुपये	नकद/डिमांड ड्राफ्ट/बैंकर्स चेक/कोर्ट फी स्टांप	2 रुपये पेज	प्रथम 20 रुपये/ द्वितीय 20 रुपये
मेघालय	10 रुपये	नकद/डिमांड ड्राफ्ट/बैंकर्स चेक	2 प्रति पेज	नहीं
मणिपुर	10 रुपये	पोस्टल ऑर्डर	2 रुपये प्रति पेज	नहीं
मिजोरम	10 रुपये	नकद/डिमांड ड्राफ्ट/बैंकर्स चेक/पोस्टल ऑर्डर	2 रुपये प्रति पेज	नहीं
नगालैंड	10 रुपये	नकद/डिमांड ड्राफ्ट/बैंकर्स चेक/पोस्टल ऑर्डर	2 रुपये प्रति पेज	नहीं
उड़ीसा	10 रुपये	नकद/ट्रेजरी चालान/पोस्टल ऑर्डर	टाइप कॉपी 2 रुपये/ कंप्यूटर प्रिंट 10 रुपये प्रति	पेज प्रथम 20 रुपये / द्वितीय 25 रुपये
पंजाब	10 रुपये	नकद/डिमांड ड्राफ्ट/बैंकर्स चेक/ पोस्टल ऑर्डर	10 रुपये प्रति पेज	नहीं
राजस्थान	10 रुपये	नकद/डिमांड ड्राफ्ट/बैंकर्स चेक/पोस्टल ऑर्डर	2 रुपये प्रति पेज	नहीं
सिक्किम	100 रुपये	मनीऑर्डर/चेक/डिमांड ड्राफ्ट/ट्रेजरी चालान	2 रुपये प्रति पेज	
त्रिपुरा	10 रुपये	नकद	2 रुपये प्रति पेज	नहीं
तमिलनाडु	10 रुपये	नकद/कोर्ट फी स्टांप/डिमांड ड्राफ्ट/बैंकर्स चेक	2 रुपये प्रति पेज	नहीं
उत्तर प्रदेश	10 रुपये	नकद/पोस्टल ऑर्डर/डिमांड ड्राफ्ट/बैंकर्स चेक/ ट्रेजरी चालान	2 रुपये प्रति पेज	नहीं
उत्तराखंड	10 रुपये	नकद/डिमांड ड्राफ्ट/बैंकर्स चेक/ट्रेजरी चालान/ पोस्टल ऑर्डर/नॉन ज्यूडिसियल स्टांप	2 रुपये प्रति पेज	नहीं
पश्चिम बंगाल	10 रुपये	कोर्ट फी स्टांप	2 रुपये प्रति पेज	नहीं

ज़रा हट के

चोरी करना फ़ायदेमंद!

चौंकिए मत, ऐसा भारत में नहीं, बल्कि कनाडा में हो रहा है. अब कनाडा में चोरी करना फ़ायदेमंद हो सकता है. यहां पर किसी चोर को तब तक सज़ा नहीं हो सकती, जब तक उसे चोरी करते रंगे हाथों न पकड़ा जाए. चीनी मूल के एक दुकानदार डेविड चेन ने मई 2009 में अपनी दुकान में चोरी करने वाले एक चोर का पीछा करके उसे पकड़ लिया और पुलिस के आने तक बांधे रखा था. उन्हें इस मामले में अब तक अदालती सुनवाई का सामना करना पड़ रहा है. चेन की ग़लती यह थी कि उन्होंने चोर बेनेट को रंगे हाथों नहीं पकड़ा था, बल्कि दुकान में चोरी होने के एक घंटे बाद उसे पकड़ा था. कनाडाई प्रेस के मुताबिक़, क़ानून कहता है कि एक नागरिक की गिरफ़्तारी तभी हो सकती है, जबकि उसे कोई ग़लत काम करते हुए रंगे हाथों पकड़ा जाए. इस मामले में चोर ने अपना अपराध तो स्वीकार कर लिया, लेकिन उसने यह भी कहा कि वह दुकानदार के कृत्य से प्रताड़ित हुआ.

आपराधिक पृष्ठभूमि वाले बेनेट ने अदालत को बताया कि जब वह भाग रहा था तो तीन लोगों ने उसका पीछा किया और पकड़ने के बाद उसे बांधकर मारा-पीटा. बेनेट ने बताया कि जब पुलिस वहां पहुंची, तब उसने राहत की सांस ली. चेन ने बताया कि उनकी दुकान में हमेशा चोरी होती रहती है, लेकिन पुलिस उन्हें शिक़ायत दर्ज कराने से रोकती है. कई बार जब वह पुलिस को बुलाते हैं तो वह पांच घंटे बाद वहां पहुंचती है और चोर को थोड़ी-बहुत चेतावनी देकर छोड़ देती है. यहां की कुछ भारतीय दुकानों में चोरी होना आम बात है. हर बार पुलिस चोरों को यूं ही छोड़ देती है.

चूहों के लिए गर्भ निरोधक गोली

चूहे नेपाल की बहुत बड़ी समस्या हैं. वे यहां की फ़सल का एक बहुत बड़ा हिस्सा खा जाते हैं. इसी के मद्देनज़र नेपाल के वैज्ञानिकों ने इसका हल खोज लिया है. नेपाल एग्री कल्चरल सोसायटी (एनएआरसी) के वैज्ञानिकों ने एक ऐसी गोली ईजाद की है, जिससे चूहे अपनी आबादी नहीं बढ़ा सकेंगे. इस काम में पूरे तीन साल का समय लगा. वैज्ञानिकों ने यह गोली सीताफल के बीजों के पाउडर से बनाई है. जो चूहा सात दिनों तक इन गोलियों को खाएगा, वह प्रजनन के अयोग्य हो जाएगा. एनएआरसी ने यह शोध तब शुरू किया, जब यहां के अधिकारियों ने बंदरों पर किए गए एक प्रयोग से संबंधित लेख पढ़ा. बंदरों को नीम की पत्तियों से निकलने वाला तरल पदार्थ युक्त भोजन दिया गया था, जिससे उनकी आबादी को बढ़ने से रोका जा सके. नेपाल ऐसा पहला देश है, जिसने सीताफल के बीजों से यह दवा बनाई है. इसे बनाने के लिए सीताफल के बीजों के 20 ग्राम पाउडर, गेहूं के आटे, चना एवं मूंगफली पाउडर और दूध का इस्तेमाल किया गया है. गोली का प्रयोग चार नर और चार मादा चूहों पर किया गया, जो सफल रहा. वैज्ञानिकों को उम्मीद है कि इस गोली के सकारात्मक परिणाम देखने को मिलेंगे. नेपाल में चूहों की 45 प्रजातियां पाई जाती हैं. इनमें से पांच प्रजातियों के चूहे फ़सलों को बुरी तरह नष्ट कर देते हैं.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

राशिफल

दिल्ली, 25 अक्टूबर-31 अक्टूबर 2010

मेष (21 मार्च से 20 अप्रैल): आप धन कमाने के लिए किसी मार्ग की तलाश में रहेंगे. जोखिम के कार्यों से स्वयं को दूर रखें, नुक़सान की आशंका है. घर में किसी परेशानी की वजह से पैसा ख़र्च होगा. कहीं यात्रा पर जाना पड़ सकता है. समाज में आपके लिए प्रतिष्ठा के नए द्वार खुल सकते हैं.

वृष (21 अप्रैल से 20 मई): किसी व्यक्ति के साथ कोई यात्रा दिलचस्प रहेगी. बुज़ुर्गों का स्वास्थ्य चिंता का विषय हो सकता है. शिक्षा के क्षेत्र में किसी प्रतियोगिता की तैयारी कर रहे हैं तो उसमें सफलता के योग हैं. आय के क्षेत्र में नए रास्ते खुलेंगे. संतान से संबंधित कोई सुखद समाचार मिल सकता है.

मिथुन (21 मई से 20 जून): रचनात्मक अथवा मांगलिक कार्यों के लिए किया जा रहा प्रयास सफल साबित होगा. संतान के संबंध में कोई सुखद समाचार मिल सकता है. स्वास्थ्य के प्रति सावधानी अपेक्षित है. रुके हुए कार्य पूरे हो जाएंगे. तरक्की के योग हैं.

कर्क (21 जून से 20 जुलाई): समय के साथ अपनी योजना में बदलाव करना पड़ेगा. रूठे मित्रों को मनाना आसान रहेगा. कोई नई शुरुआत आपको खुशियां और प्यार देगी. वित्तीय फ़ायदे होंगे और आप रचनात्मक कार्यों में संलग्न रहेंगे. स्वास्थ्य के प्रति सावधान रहें.

सिंह (21 जुलाई से 20 अगस्त): विवादों के चलते घर में अशांति का माहौल बना रहेगा. विरोधियों के कारण मुश्किल हो सकती है. मेहमानों की आवाजाही बनी रहेगी. पेट से संबंधित शिक़ायत हो सकती है. सपने पूरे करने के अवसर मिलेंगे. नए कार्य की रूपरेखा बनेगी.

कन्या (21 अगस्त से 20 सितंबर): आयात-निर्यात के कारोबार में अच्छा लाभ मिल सकता है. प्रतियोगी परीक्षा में सफलता के आसार हैं. खानपान में लापरवाही से स्वास्थ्य ख़राब हो सकता है. परिवार में किसी से झगड़ा हो सकता है. वाणी पर नियंत्रण बनाए रखें.

तुला (21 सितंबर से 20 अक्टूबर): विद्यार्थियों को उच्च अध्ययन में सफलता मिलेगी. ज़बरदस्ती अपनी बात सिद्ध करने पर अड़े रहे तो अपना नुक़सान करा बैठेंगे. यात्रा का कार्यक्रम स्थगित हो सकता है. विवादास्पद मामलों को शांति से सुलझाएं. किसी बुज़ुर्ग का स्वास्थ्य चिंता का विषय बन सकता है.

वृश्चिक (21 अक्टूबर से 20 नवंबर): महत्वपूर्ण कार्य निबटाने के लिए यह समय अच्छा है. जीवनसाथी के व्यवहार से खिन्नता बढ़ेगी. आपकी आर्थिक स्थिति में कुछ बदलाव आएंगे. निवेश से फ़ायदा होगा. दूसरों की मदद के लिए दिन-रात एक करेंगे. कार्यस्थल पर सबको साथ लेकर चलने में सफल होंगे.

धनु (21 नवंबर से 20 दिसंबर): नए संपर्क भाग्योदय में सहायक हो सकते हैं. स्पष्ट कहने की प्रवृत्ति पर थोड़ा अंकुश लगाएं. नए समझौते के लिए अब तक किए गए प्रयास सफल होंगे. मांगलिक कार्यों के लिए किया जा रहा प्रयास सफल होगा. अचानक कहीं यात्रा पर जाना पड़ सकता है.

मकर (21 दिसंबर से 20 जनवरी): युवाओं को करियर में बेहतर अवसर मिलेंगे. वाणी पर नियंत्रण बनाए रखें, अन्यथा विवाद की स्थिति उत्पन्न हो सकती है. मार्ग की हर बाधा को आप आसानी से पार कर लेंगे. बच्चों की पढ़ाई को लेकर चिंता हो सकती है.

कुंभ (21 जनवरी से 20 फरवरी): व्यय पर नियंत्रण बनाए रखें. आप कारोबारी विस्तार का प्रयास करेंगे. मित्रों की मदद से कार्यक्षेत्र में सफलता मिलेगी. परिवार की स्थिति ठीक रहेगी. मेहमानों के कारण निर्धारित कार्यक्रम बदलने पड़ेंगे. वित्तीय फ़ायदे धीरे-धीरे, लेकिन अच्छे होंगे.

मीन (21 फरवरी से 20 मार्च): बड़ा निर्णय लेने से पूर्व संबंधित व्यक्ति को विश्वास में लेने का पूरा प्रयास करेंगे. स्वास्थ्य के प्रति लापरवाही से पुरानी बीमारी उभर सकती है. सामाजिक कार्यक्रमों में हिस्सा लेंगे. ऐसी रणनीति अपनाएं, जिससे विरोधी परास्त हो जाएंगे.

पंडित सुदर्शन
feedback@chauthiduniya.com

देश की सभी राजनीतिक पार्टियां अपने फ़ायदे के लिए राष्ट्रीय हितों की अनदेखी कर रही हैं और न चाहते हुए भी राजतंत्र की वापसी की पृष्ठभूमि तैयार करती दिख रही हैं.

अनिश्चितता के बादल कब छटेंगे?

राजतंत्र की वापसी की मांग लगातार ज़ोर पकड़ती जा रही है. नेपाल की जनता निराश है, क्योंकि राजनीतिक पार्टियां अपने व्यक्तिगत स्वार्थों की क़ीमत पर उनके हितों की अनदेखी कर रही हैं. पिछले चार महीनों से देश नेतृत्वविहीनता के दौर से गुज़र रहा है, क्योंकि बारह दौर के मतदान के बाद भी संविधान सभा नए प्रधानमंत्री का चुनाव करने में नाकाम रही है. नए संविधान का निर्माण कार्य अधर में लटका है, लेकिन कोई इसकी चिंता नहीं कर रहा.

आदित्य पूजन

नेपाल में राजनीतिक अस्थिरता का दौर समाप्त होने का नाम नहीं ले रहा. प्रधानमंत्री पद के लिए बारह दौर के मतदान के बावजूद कोई नतीजा नहीं निकल पाया. पूर्व प्रधानमंत्री माधव कुमार नेपाल ने माओवादियों के दबाव में पिछले 30 जून को ही इस्तीफ़ा दे दिया था. इसके बाद से तमाम कोशिशों के बावजूद नई सरकार का गठन नहीं हो पाया है. नए संविधान के निर्माण का कार्य अधर में लटका हुआ है. पूरे देश में अशांति का माहौल है, लेकिन सभी राजनीतिक पार्टियां स्वार्थ सिद्धि में लगी हैं. ग़रीबी और बेरोज़गारी लगातार बढ़ रही है, नेपाल के अधिकांश हिस्सों में क़ानून-व्यवस्था की हालत बद से बदतर होती जा रही है. रोजाना के बंद और विरोध प्रदर्शनों के चलते आम लोगों की दिक्कतें दिनोंदिन बढ़ती जा रही हैं, लेकिन इसकी चिंता किसी को नहीं है. माओवादी अपनी मांग पर अड़े हैं, जबकि सच्चाई यही है कि उनके सहयोग के बिना न तो संविधान निर्माण का काम पूरा हो सकता है और न ही कोई सरकार टिकाऊ हो सकती है. इसमें कोई संदेह नहीं कि संविधान सभा में सबसे ज़्यादा सीटों वाली यूनिफाइड कम्युनिस्ट पार्टी ऑफ नेपाल (माओवादी) का अक्खड़ रवैया ही देश में राजनीतिक गतिरोध का सबसे बड़ा कारण है, लेकिन अन्य राजनीतिक पार्टियां भी ज़्यादा अलग नहीं हैं. नेपाली कांग्रेस हर क़ीमत पर सरकार का नेतृत्व अपने हाथों में रखना चाहती है. प्रधानमंत्री पद के एकमात्र उम्मीदवार और पार्टी के उपाध्यक्ष रामचंद्र पौडेल को संविधान सभा में सदस्यों का ज़रूरी समर्थन हासिल नहीं है, लेकिन वह चुनावी दौड़ से हटने से इंकार कर रहे हैं. चार मधेशी पार्टियों का गठबंधन जिसे चाहे प्रधानमंत्री बना सकता है, लेकिन आपसी मतभेदों और राजनीतिक सौदेबाज़ी के चलते ऐसा नहीं हो पा रहा है. यानी देश की सभी राजनीतिक पार्टियां अपने फ़ायदे के लिए राष्ट्रीय हितों की अनदेखी कर रही हैं और न चाहते हुए भी राजतंत्र की वापसी की पृष्ठभूमि तैयार करती दिख रही हैं.

हाल के दिनों की बात है, जब पूर्व राजा ज्ञानेंद्र दशईं महोत्सव में भाग लेने पाटन के बगलामुखी मंदिर पहुंचे. परंपरागत रूप से राजा ही इस महोत्सव का मुख्य अतिथि होता है और आयोजकों ने इस बार भी उन्हें आमंत्रित किया था. ज्ञानेंद्र के पहुंचने से पहले ही हज़ारों लोगों की भीड़ उनके स्वागत के लिए वहां खड़ी थी. सबकी ज़ुबान पर एक ही मांग थी, राजा आएं, शांति लाएं. यह हाल तब है, जबकि ज्ञानेंद्र का वहां आना निश्चित नहीं था. राजतंत्र की वापसी को लेकर बढ़ती मांग के चलते देश का लोकतांत्रिक नेतृत्व धार्मिक-राजनीतिक समारोहों में उन्हें शामिल होने से रोकने की कोशिश करता रहा है. सितंबर महीने में इंद्र-जात्रा महोत्सव में भाग लेने से रोकने के लिए उन्हें घर में नज़रबंद कर दिया गया था. आम जनता में इसके ख़िलाफ़ खासा रोष देखने को मिला. दो साल पहले यही जनता राजतंत्र के खात्मे के लिए माओवादियों के साथ सड़कों पर उतर आई थी, लेकिन आज स्थितियां पूरी तरह बदल चुकी हैं. राजनीतिक दलों की अवसरवादिता और सत्तालोलुपता के चलते जनता का मोहभंग होता जा रहा है. उसे लगने लगा है कि उसकी परेशानियों के बारे में सोचने वाला कोई नहीं है. उसे राजतंत्र के पुराने दिनों की याद आने लगी है, जब नेपाल में आम तौर पर शांति का माहौल होता था. नेपाल कभी आर्थिक दृष्टि से समृद्ध राष्ट्र नहीं रहा, लेकिन राजा के शासन के दिनों में आर्थिक स्थायित्व था. सबसे बढ़कर आम जनता को लगता था कि शासन तंत्र उसके कष्टों को समझता है, उसके हितों की चिंता करता है.

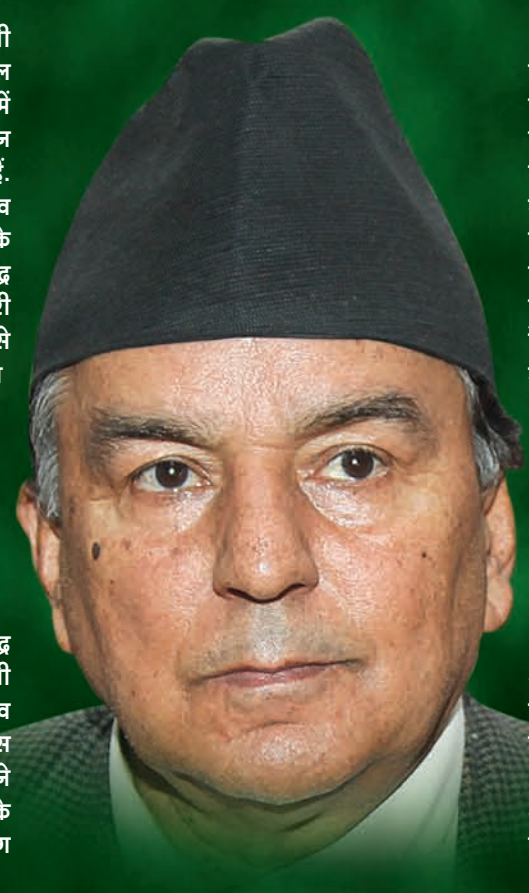

वैसे भी नेपाली समाज में राजा की हैसियत अभिभावक की तरह है. आम लोग राजा को भगवान की तरह देखते हैं, विष्णु का अवतार समझते हैं. फिर उन्होंने जिन उम्मीदों के साथ राजनीतिक दलों के हाथों में अपनी क़िस्मत सौंपी थी, वे सारी उम्मीदें आज धराशायी हो चुकी हैं. जनता को लगता है कि उसके साथ बहुत बड़ा धोखा हुआ है. सुनहरे भविष्य के सब्जबाग दिखाकर उसकी भावनाओं के साथ खिलवाड़ किया गया है. यही वजह है कि केवल आम लोग ही नहीं, बल्कि राजनीतिक दलों का एक वर्ग भी राजतंत्र की ओर उम्मीद भरी निगाहों से देख रहा है. राष्ट्रीय प्रजातंत्र पार्टी तो पहले भी खुले तौर पर राजतंत्र की वापसी की मांग करती रही है. सीपीएन-यूएमएल के राष्ट्रीय महासचिव ईश्वर पोखराल ने भी पिछले दिनों कहा कि 28 मई 2011 तक संविधान निर्माण का काम पूरा नहीं हुआ तो नेपाल की हालत और भी ज़्यादा ख़राब हो सकती है और राजतंत्र की वापसी की मांग ज़्यादा तीखी हो सकती है. शायद यही कारण है कि लोकतांत्रिक शक्तियां राजतंत्र समर्थक शक्तियों को दबाने की कोशिश कर रही हैं, लेकिन उन्हें पहले अपने रवैये में सुधार करना होगा. जनता का विश्वास दोबारा हासिल हो, इसके लिए उन्हें अपने निजी स्वार्थों और सत्तालोलुपता को तिलांजलि देनी होगी. देश में अमन-चैन का माहौल कायम हो, इसके लिए जरूरी कदम उठाने होंगे. यदि ऐसा नहीं हो सका तो नेपाल में राजतंत्र के नए दौर की संभावना से इंकार नहीं किया जा सकता.

aditya@chauthiduniya.com

e देश का पहला इंटरनेट टीवी

तीन महीने में रचा इतिहास

- हिन्दी की सबसे पॉपुलर वेबसाइट
- हर महीने 15,00,000 से ज़्यादा पाठक
- हर दिन 50,000 से ज़्यादा पाठक
- स्पेशल प्रोग्राम–भारत का राजनीतिक इतिहास
- समाचार–राजनीति, खेल, पर्यावरण, मनोरंजन
- संगीत और फ़िल्मों पर विशेष कार्यक्रम
- साई की महिमा

www.chauthiduniya.tv

एफ-2, सेक्टर-11, नोएडा-201301

बाबा के शब्दों ने लोगों में विश्वास स्थापित किया, परंतु महान आश्चर्य है कि उनके समाधिस्थ होने के बाद भी उनका प्रभाव पूर्ववत है.

बाबा और तेंडुलकर कुटुंब

मुंबई के पास बांद्रा में एक तेंडुलकर कुटुंब था, जो साई बाबा पर असीम श्रद्धा रखता था. इस कुटुंब के रघुनाथ राव तेंडुलकर ने मराठी भाषा में श्री साईनाथ भजनमाला नामक एक पुस्तक लिखी है, जिसमें बाबा की लीलाओं का मधुर वर्णन है. उनका ज्येष्ठ पुत्र बाबू डॉक्टरी की परीक्षा में बैठने के लिए अनवरत अभ्यास कर रहा था. उसने कई ज्योतिषियों को अपनी जन्म कुंडली दिखाई, लेकिन सबने बताया कि इस वर्ष उसके ग्रह उत्तम नहीं हैं, किंतु अगले वर्ष परीक्षा में बैठने से उसे अवश्य सफलता प्राप्त होगी. इससे उसे बड़ी निराशा हुई और वह अशांत सा हो गया. थोड़े दिनों के पश्चात उसकी मां शिरडी गई और उसने वहां बाबा के दर्शन किए. अन्य बातों के साथ-साथ उसने अपने पुत्र की निराशा एवं अशांति की बात भी बाबा से कही. उसके पुत्र को कुछ दिनों बाद ही परीक्षा में बैठना था. बाबा ने कहा, अपने पुत्र से कहो कि वह मुझ पर विश्वास रखे, सारे भविष्य कथन एवं ज्योतिषियों द्वारा बनाई गईं कुंडलियां एक कोने में फेंक दे और अपना अभ्यास क्रम चालू रखकर शांत चित्त से परीक्षा में बैठे. वह अवश्य ही इस वर्ष उत्तीर्ण हो जाएगा. उससे कहना कि निराश होने की कोई बात नहीं है. मां ने घर आकर बाबा का संदेश पुत्र को सुना दिया. उसने घोर परिश्रम किया और परीक्षा में बैठ गया. सारे पर्चों के जवाब बहुत अच्छे लिखे थे, परंतु फिर भी संशयग्रस्त होकर उसने सोचा कि संभव है कि उत्तीर्ण होने योग्य अंक उसे प्राप्त न हो सकें, इसलिए उसने मौखिक परीक्षा में बैठने का विचार त्याग दिया. परीक्षक तो जैसे उसके पीछे ही लगा था. उसने एक विद्यार्थी के ज़रिए सूचना भेजी कि उसे लिखित परीक्षा में उत्तीर्ण होने लायक़ अंक प्राप्त हैं, इसलिए अब उसे मौखिक परीक्षा में अवश्य बैठना चाहिए. इस प्रकार प्रोत्साहन पाकर वह उसमें भी बैठ गया और दोनों परीक्षाओं में उत्तीर्ण हो गया. उस वर्ष ग्रह दशा विपरीत होते हुए भी बाबा की कृपा से उसने सफलता पाई. यहां केवल इतनी बात ध्यान देने योग्य है कि कष्ट और संशय की उत्पत्ति अंत में दृढ़ विश्वास में परिवर्तित हो जाती है. जैसी भी हो, परीक्षा तो होती है, परंतु यदि हम बाबा पर विश्वास और श्रद्धा रखकर प्रयत्न करते रहें तो हमें सफलता अवश्य मिलेगी.

रघुनाथ राव एक विदेशी व्यवसायी फर्म में नौकरी करते थे. वह बहुत वृद्ध हो चुके थे और अपना कार्य सुचारू रूप से नहीं कर सकते थे. इसलिए वह अब छुट्टी लेकर विश्राम करना चाहते थे. छुट्टी लेने पर भी उनके स्वास्थ्य में कोई विशेष परिवर्तन नहीं हुआ. अब यह आवश्यक था कि सेवानिवृत्ति की पूर्वकालिक छुट्टी ली जाए. एक विश्वासपात्र नौकर होने के नाते प्रधान प्रबंधक ने उन्हें पेंशन देकर सेवानिवृत्त करने का निर्णय किया. पेंशन कितनी दी जाए, यह प्रश्न विचाराधीन था. उन्हें 150 रुपये मासिक वेतन मिलता था, इस हिसाब से पेंशन हुई 75 रुपये, लेकिन यह राशि उनके कुटुंब के निर्वाह हेतु अपर्याप्त थी, इसलिए वह बड़े चिंतित थे. निर्णय होने के पंद्रह दिन पूर्व ही बाबा ने श्रीमती तेंडुलकर को स्वप्न में दर्शन देकर कहा कि मेरी इच्छा है कि पेंशन 100 रुपये दी जाए. क्या तुम्हें इससे संतोष होगा. श्रीमती तेंडुलकर ने कहा कि बाबा, मुझ दासी से आप क्या पूछते हैं, हमें तो आपके श्रीचरणों में पूरा विश्वास है. यद्यपि बाबा ने 100 रुपये कहे थे, परंतु इसे विशेष प्रकरण समझ कर 10 रुपये अधिक अर्थात 110 रुपये पेंशन निश्चित हुई. इससे आप समझ सकते हैं कि बाबा अपने भक्तों के लिए कितना स्नेह और कितनी चिंता रखते थे.

मां ने घर आकर बाबा का संदेश पुत्र को सुना दिया. उसने घोर परिश्रम किया और परीक्षा में बैठ गया. सारे पर्चों के जवाब बहुत अच्छे लिखे थे, परंतु फिर भी संशयग्रस्त होकर उसने सोचा कि संभव है कि उत्तीर्ण होने योग्य अंक उसे प्राप्त न हो सकें, इसलिए उसने मौखिक परीक्षा में बैठने का विचार त्याग दिया. परीक्षक तो जैसे उसके पीछे ही लगा था.

साई का प्रसाद

एक बार गोवा के एक मामलतदार राले ने लगभग 300 आमों का एक पार्सल शामा के नाम शिरडी भेजा. पार्सल खोलने पर प्रायः सभी आम अच्छे निकले. भक्तों में उनके वितरण का कार्य शामा को सौंपा गया. उनमें से बाबा ने चार आम दामू अण्णा के लिए अलग निकाल कर रख लिए. दामू अण्णा की तीन स्त्रियां थीं, परंतु अपने दिए हुए वक्तव्य में उन्होंने बताया था कि उनकी केवल दो स्त्रियां हैं.

वह संतानहीन थे, इसलिए उन्होंने अनेक ज्योतिषियों से इसका समाधान कराया और स्वयं भी ज्योतिष शास्त्र का थोड़ा सा अध्ययन करके ज्ञात कर लिया कि जन्म कुंडली में एक पाप ग्रह स्थित होने के कारण इस जीवन में उन्हें संतान का मुंह देखने का कोई योग नहीं है, परंतु बाबा के प्रति उनकी अटल श्रद्धा थी. पार्सल मिलने के दो घंटे पश्चात ही वह पूजन हेतु मस्जिद में आए. उन्हें देखकर बाबा कहने लगे कि लोग आमों के लिए चक्कर काट रहे हैं, परंतु ये तो दामू के हैं. जिसके हैं, उसी को खाने और मरने दो. यह सुनकर दामू अण्णा के हृदय पर आघात सा हुआ, परंतु म्हालसापति (शिरडी के एक भक्त) ने उन्हें समझाया कि इस मृत्यु शब्द का अर्थ अहंकार के विनाश से है और बाबा के चरणों की कृपा से तो वह आशीर्वादस्वरूप है, तब वह आम खाने के लिए तैयार हो गए.

इस पर बाबा ने कहा कि इन्हें तुम न खाओ, अपनी छोटी स्त्री को खाने दो. इन आमों के प्रभाव से चार पुत्रों और चार पुत्रियों की प्राप्ति होगी. इस आज्ञा को शिरोधार्य कर दामू अण्णा ने वे आम ले जाकर अपनी छोटी स्त्री को दिए. धन्य है श्री साई बाबा की लीला, जिन्होंने भाग्य-विधान पलट कर उन्हें संतान सुख दिया. बाबा द्वारा स्वेच्छा से दिए गए वचन सत्य हुए, ज्योतिषियों के नहीं.

बाबा के जीवनकाल में उनके शब्दों ने लोगों में विश्वास स्थापित किया, परंतु महान आश्चर्य है कि उनके समाधिस्थ होने के बाद भी उनका प्रभाव पूर्ववत है. बाबा ने कहा कि मुझ पर पूर्ण विश्वास रखो. यद्यपि मैं देह त्याग कर दूंगा, परंतु फिर भी मेरी अस्थियां आशा और विश्वास का संचार करती रहेंगी.

बाबा के जीवनकाल में उनके शब्दों ने लोगों में विश्वास स्थापित किया, परंतु महान आश्चर्य है कि उनके समाधिस्थ होने के बाद भी उनका प्रभाव पूर्ववत है. बाबा ने कहा कि मुझ पर पूर्ण विश्वास रखो. यद्यपि मैं देह त्याग कर दूंगा, परंतु फिर भी मेरी अस्थियां आशा और विश्वास का संचार करती रहेंगी. केवल मैं ही नहीं, मेरी समाधि भी वार्तालाप करेगी, चलेगी, फिरेगी और उन्हें आशा का संदेश पहुंचाती रहेगी, जो अनन्य भाव से मेरे शरणागत होंगे. निराश न होना कि मैं तुमसे विदा हो जाऊंगा. तुम सदैव मेरी अस्थियों को भक्तों के कल्याणार्थ चिंतित पाओगे. यदि मेरा निरंतर स्मरण करोगे और मुझ पर दृढ़ विश्वास रखोगे तो तुम्हें अधिक लाभ होगा.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

अंग्रेजों के जाने के पश्चात भी अंग्रेजपरस्त लोगों की गुलाम मानसिकता के कारण आज़ाद भारत में आज भी निज भाषा गौरव का बोध परवान नहीं चढ़ पा रहा है.

बाज़ार के फंदे में हिंदी कहानीकार

अनंत विजय

अभी चंद दिनों पहले की बात है, मेरी पत्नी चित्रा मुदगल की किताब–गेंद और अन्य कहानियां ख़रीद लाई. इस संग्रह के ऊपर दो मासूम बच्चों की तस्वीर छपी है और नीचे लिखा है, बच्चों पर केंद्रित कहानियों का अनूठा संकलन. मुझे भी लगा कि पेंग्विन से चित्रा जी की कहानियों का नया संग्रह आया है, लेकिन जब मैंने उसे उलटा–पुलटा तो लगा कि उसमें तो उनकी पुरानी कहानियां छपी हैं. उसके बाद जब मैंने अपनी व्यक्तिगत लाइब्रेरी को खंगालना शुरू किया तो पता चला कि चित्रा मुदगल के पांच कहानी संकलन मेरे पास हैं. भूख जो ज्ञानगंगा दिल्ली से प्रकाशित हुई है, दस प्रतिनिधि कहानियां जो किताबघर प्रकाशन से प्रकाशित हुई हैं, चर्चित कहानियां जो सामयिक प्रकाशन से प्रकाशित हुई हैं. इसके अलावा डायमंड बुक्स से प्रकाशित संग्रह भी मेरी नज़र से गुज़र चुका है. अंत में सामयिक प्रकाशन ने ही चित्रा मुदगल की संपूर्ण कहानियों का संग्रह आदि–अनादि के नाम से तीन खंडों में छापा है. इन सारे संग्रहों में घूम–फिरकर वही–वही कहानियां प्रकाशित हैं. हिंदी साहित्य में यह काम सिर्फ़ चित्रा मुदगल ने नहीं किया है, ज़्यादातर कहानीकारों ने साहित्य में यह घपला किया है. हिंदी साहित्य को लंबे समय से नज़दीक से देखने वालों का कहना है कि हिंदी में यह खेल हिमांशु जोशी ने शुरू किया. जानकारों की मानें तो इस प्रवृत्ति के प्रणेता हिमांशु जोशी हैं. कहने वाले तो यहां तक कहते हैं कि जोशी जी की उतनी कहानियां नहीं हैं, जितने उनके संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं. कहीं से चर्चित कहानियां, कहीं से प्रतिनिधि कहानियां, कहीं से फलां तथा अन्य कहानियां, कहीं से प्रेम कहानियां, कहीं से बच्चों की कहानियां, कहीं से अमुक व्यक्ति की पसंद की कहानियां. हद तो तब हो गई, जब कहानीकार अपनी उम्र और सालगिरह के हिसाब से संग्रह छपवाने लगे. ऐसा नहीं है कि सिर्फ़ हिमांशु जोशी और चित्रा मुदगल ने ही यह काम किया है. हिंदी के कमोबेश सभी कहानीकारों ने इस तरह से पाठकों को छला है. वरिष्ठ कहानीकार गंगा प्रसाद विमल के भी कई संग्रह हैं, जिनमें कहानियों का दोहराव है. चंद लोगों के नाम लेने का मक़सद सिर्फ़ इतना है कि मेरी बातें हवाई न लगें और वे तथ्यों पर आधारित हों.

बाज़ारवाद और बाज़ार को पानी पी–पीकर सोते–जागते गरियाने वाले हिंदी के इन लेखकों से यह पूछा जाना चाहिए कि वे बाज़ार की ताक़तों के हाथों क्यों खेल रहे हैं? क्या व्यक्तिगत फ़ायदे के लिए बाज़ार की ताकतों के आगे घुटने टेक देने में उन्हें कोई गुरेज नहीं है?

दरअसल इस पूरे खेल का मक़सद सिर्फ़ और सिर्फ़ पैसा कमाना है. पैसा कमाने की इस दौड़ में हिंदी के कहानीकार यह भूलते जा रहे हैं कि वे पाठकों के साथ कितना बड़ा छल कर रहे हैं. चमचमाते कवर और नए शीर्षक को देखकर कोई भी पाठक अपने महबूब लेखक–लेखिका की किताबें ख़रीद लेता है, लेकिन जब वह घर आकर उसे पलटता है तो ख़ुद को ठगा महसूस करने के अलावा उसके पास कोई चारा नहीं बचता. पैसे की हानि के साथ–साथ टूटता–दरकता है उसका विश्वास. वह विश्वास, जो एक पाठक अपने प्रिय लेखक पर करता है. पाठकों के इसी विश्वास की बुनियाद साहित्य की सबसे बड़ी ताक़त है और जब उसमें ही दरार पड़ती है तो यह सीधे–सीधे साहित्य का नुक़सान है, जो फौरी तौर पर तो नज़र नहीं आएगा, लेकिन इसके दूरगामी परिणाम होंगे. जल्दी पैसा कमाने की होड़ में हिंदी का कहानीकार यह भूलता जा रहा है कि अगर उसने यह प्रवृत्ति नहीं छोड़ी तो उसे पाठक मिलने बंद हो जाएंगे. अभी ही वे पाठकों की कमी का रोना रोते हैं, लेकिन अगर एक बार पाठकों का भरोसा लेखकों से उठ गया तो क्या अंजाम होगा, इसकी सिर्फ़ कल्पना की जा सकती है.

यह घपला सिर्फ़ इस रूप में सामने नहीं आया है. हिंदी में कई ऐसे कहानीकार हैं, जिनकी लंबी कहानी किसी पत्रिका में छपी, फिर उसी लंबी कहानी को उपन्यास के रूप में प्रकाशित करा लिया गया. वर्तमान साहित्य के कहानी महाविशेषांक में हिंदी की वरिष्ठ लेखिका कृष्णा सोबती की लंबी कहानी ऐ लड़की प्रकाशित हुई थी, जिसे बाद में स्वतंत्र रूप से उपन्यास के रूप में छापा–छपवाया गया. इसी तरह दूधनाथ सिंह की लंबी कहानी नमो अंधकारम भी पहले कहानी के रूप में प्रकाशित–प्रचारित हुई, लेकिन कालांतर में वह एक उपन्यास के रूप में छपी. यही काम हिंदी के जादुई यथार्थवादी कहानीकार भी कर चुके हैं, जिन्होंने हंस में प्रकाशित अपनी लंबी कहानियों को डबल स्पेस में टाइप कराकर उपन्यास

बना दिया. एक ही रचना कहानी भी है और उपन्यास भी, एक ही समय पर यह कैसे संभव है, लेकिन हिंदी में ऐसा धड़ल्ले से हुआ है. यह पाठकों के साथ छल नहीं तो क्या है? अपने फ़ायदे के लिए पाठकों को ठगना कितना अनैतिक है, इसका फ़ैसला तो भविष्य में होगा.

बाज़ारवाद और बाज़ार को पानी पी–पीकर सोते–जागते गरियाने वाले हिंदी के इन लेखकों से यह पूछा जाना चाहिए कि वे बाज़ार की ताक़तों के हाथों क्यों खेल रहे हैं? क्या व्यक्तिगत फ़ायदे के लिए बाज़ार की ताक़तों के आगे घुटने टेक देने में उन्हें कोई गुरेज नहीं है? सारे सिद्धांत और सारे वाद क्या सिर्फ़ काग़ज़ों या उनके आग उगलते भाषणों में ही नज़र आएंगे या फिर सारी क्रांति पड़ोसी के घर से शुरू होगी? हिंदी में बार–बार नैतिकता की बात उठाने वाले लेखकों–आलोचकों की इस मसले पर चुप्पी हैरान करने वाली है. पिछले लगभग दो–तीन दशकों से कहानीकारों का पाठकों के साथ यह धोखा जारी है, लेकिन कहीं किसी कोने से कोई आवाज़ नहीं उठी, किसी लेखक ने इस प्रवृत्ति पर आपत्ति नहीं की. प्रगतिशीलता और साहित्यिक शुचिता की बात करने वाले वामपंथी लेखकों को भी कहानीकारों का यह छल नज़र नहीं आया, बल्कि वे तो खुले तौर पर इस खेल में शामिल नज़र आते हैं. मार्क्सवाद को अपने कंधे पर ढोने वाले मार्क्सवादी लेखकों–आलोचकों को यह धोखा नज़र नहीं आया या नज़र आने के बावजूद वे आंखें मूंदे बैठे रहे. लेखक संगठनों तक ने इस धोखेबाज़ी पर कुछ न बोलना ही उचित समझा. उनसे कोई उम्मीद भी नहीं की जा सकती है, क्योंकि लेखक संगठन लगभग मृतप्राय हैं और जो बचे हैं, वे भी क्षेत्रीय राजनीतिक दलों की तरह अपने नेताओं के जेबी संगठन मात्र बनकर रह गए हैं. कुछ कहानीकारों का यह तर्क है कि अलग–अलग प्रकाशकों से अलग–अलग नामों से कहानी संग्रह छपवाने का मूल मक़सद वृहत्तर पाठक समुदाय तक पहुंचना है. कई कहानीकार यह भी कहते हैं कि एक प्रकाशन से संस्करण ख़त्म होने के बाद ही वे दूसरे प्रकाशक के यहां से अपनी कहानियां छपवाते हैं, लेकिन ये दोनों तर्क एक सफेद झूठ की तरह हैं. कई संकलन मेरे सामने रखे हैं, जिनका प्रकाशन वर्ष या तो एक ही है या फिर अगले वर्ष. हिंदी प्रकाशन जगत को नज़दीक से जानने वालों का मानना है कि अभी हिंदी में यह स्थिति नहीं आई है कि किसी कहानी संग्रह का एक संस्करण छह माह या एक साल में ख़त्म हो जाए. इसके पीछे चाहे संग्रह के कम ख़रीददार हों या फिर प्रकाशकों का घपला. जहां तक वृहत्तर पाठक समुदाय तक पहुंचने की बात है तो यह अलग–अलग नाम से अलग–अलग प्रकाशन संस्थानों से छपवाने से कैसे संभव है, यह फॉर्मूला भी अभी सामने आना शेष है. अब वक़्त आ गया है कि हिंदी के तमाम वरिष्ठ लेखक इस बात पर गंभीरता से विचार करें, पाठकों के साथ दशकों से हो रहे छल पर मिल–बैठकर बात करें और उसे रोकने के लिए तुरंत कोई क़दम उठाएं, वरना हिंदी के पाठक ही इस बात का फ़ैसला कर देंगे. और पाठक अगर फ़ैसला करेंगे तो वह दिन हिंदी के कहानीकारों के लिए बहुत अशुभ साबित होगा और फिर उस फ़ैसले पर पुनर्विचार का कोई मौक़ा भी नहीं होगा, क्योंकि जिस तरह लोकतंत्र में मतदाता का फ़ैसला अंतिम होता है, उसी तरह साहित्य में पाठक का फ़ैसला अंतिम और मान्य होता है.

(लेखक आईबीएन–7 से जुड़े हैं)

anant.ibn@gmail.com

पुस्तक अंश मुन्नी मोबाइल

गतांक से आगे

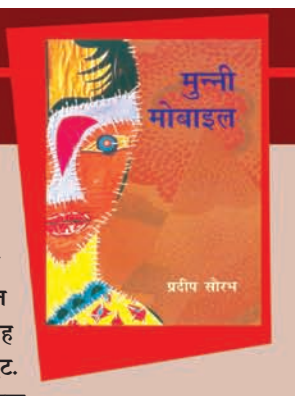

प्रदीप सौरभ

उन दिनों रमजान के दिन चल रहे थे. उसने अपने दिल पर हाथ रखते हुए कहा, सर, मैं रोजे से हूं. मैं झूठ नहीं बोलूंगी. मैंने अभी हाल में नौकरी ज्वाइन की है. यदि आप लोग कंप्लेंट करेंगे तो मेरी नौकरी जा सकती है. मैं ग़रीब घर की लड़की हूं. मेरे ऊपर काफी ज़िम्मेदारी है.

जुबेदा की बात सुनकर इंद्राणी मजूमदार पिघल गईं. मामला किसी तरह शांत हुआ. बाद में जुबेदा सबके लिए फ्रूट सलाद और अन्य बहुत कुछ लाई, जो उपलब्ध था. खा–पीकर सब लोग सो गए. छह घंटे का सफर बाक़ी था.

...लंदन के गैटविक एयरपोर्ट में आनंद भारती और टीम के अन्य सदस्य पहुंच चुके थे. लगेज लेकर वे आगे बढ़ रहे थे कि उनके नाम की तख्तियां चमक उठीं. सब तख्ती पकड़े उस महिला से मुखातिब थे. महिला ने अपना परिचय दिया, तीसा केलेगर. वह ब्रिटिश सरकार की लाइजन ऑफिसर थी. दुबली–पतली. रेशम की तरह सफेद बाल. उम्र कोई पचपन की रही होगी, लेकिन चुस्त–दुरुस्त. सबने उसे अपना परिचय दिया.

इमीग्रेशन क्लीयरिंग पर पासपोर्ट और वीजा चेकिंग पर एक महिला बैठी हुई थी. शक्ल–सूरत से पक्की भारतीय लग रही थी. थी भी. उसने साड़ी पहन रखी थी. भारतीयों को देख वह अंदर से चहक उठी. कुछ और पूछती कि उससे पहले उसने आनंद भारती को बताया, मैं लखनऊ की रहने वाली हूं. आमिर ख़ान की रंग दे बसंती आपने देखी है, कैसी है?

आनंद भारती ने अपना सिर नकारात्मक मुद्रा में हिला दिया. इस बीच वीजा चेक

करने वालों को तीसा केलेगर ने इशारा करते हुए कहा, स्टेट गेस्ट. इसके बाद सब एयरपोर्ट से बाहर थे. बाहर एक लंबी काली गाड़ी इंतज़ार में थी. सब उसमें बैठकर होटल की ओर रवाना हो गए.

होटल बकिंघम पैलेस के सामने था. आमतौर पर भारतीयों को ब्रिटिश सरकार यहीं ठहराती है. वैसे भी लंदन आने वाले भारतीय क्राउन प्लाज़ा में ही ठहरते हैं. आनंद भारती सहित सभी को कमरों की चाबियां मिल चुकी थीं. तीसा केलेगर के साथ सबकी उस दिन की यह आख़िरी मुलाक़ात थी. वह यह कहकर चली गई कि कल सुबह आठ बजे वे होटल की लॉबी में मिल रहे हैं अपने आगे के कार्यक्रम के लिए. जाते–जाते वह यह कहना नहीं भूली, ऐट मीन्स ऐट. आई मीन शॉर्प ऐट. शायद वह भारतीयों की लेटलतीफी से अच्छे से वाक़िफ़ थी. दोपहर के तीन बजे थे. कमरे में लगेज रखने के बाद आनंद भारती ने अपने विश्वविद्यालय के जमाने के दोस्त राजेश जोशी को फोन लगाया. जोशी लंबे समय से लंदन में हैं. बीबीसी में काम करते हैं. अच्छी पोजीशन में हैं. जोशी और आनंद भारती की दोस्ती इलाहाबाद से है. वह उनसे जूनियर थे. दिल्ली में भी उन्होंने पत्रकारिता की थी तो आनंद भारती का उनसे मिलना–जुलना सदैव बना रहा था. इलाहाबाद में भी वह नक्सली छात्र संगठन से जुड़े थे. राजनैतिक और वैचारिक रूप से भी उनके काफी नज़दीक थे जोशी.

जोशी से शाम पांच बजे मिलने का कार्यक्रम तय हुआ. बिग बैन के सामने. बिग बैन इंग्लैंड की संसद की इमारत का ही एक हिस्सा है. तय यह भी हुआ कि पूरी रात लंदन के चप्पे–चप्पे को छाना जाएगा. आनंद भारती के लिए लंदन बिल्कुल नया था. जोशी ही उनके गाइड होने वाले थे. बिग बैन की घड़ी लंदन की अपनी पहचान है. बिग बैन में पांच बज रहे थे. आनंद भारती पूछते–पाछते बिग बैन के सामने पहुंच चुके थे. बिग बैन क्राउन प्लाजा से ज़्यादा दूर नहीं था. ***अगले अंक में जारी...***

हिंदी का महत्व और विडंबनाएं

सिर्फ़ मातमपुर्सी से काम नहीं चलने वाला. हिंदी भारतवर्ष में राज–काज की भाषा है, हमारे सम्मान की प्रतीक है और सभी प्रांतीय एवं स्थानीय भाषाएं हिंदी की बहनें. भारतवर्ष में बोली जाने वाली समस्त स्थानीय भाषाओं का एक समान आदर–सम्मान हमारा राष्ट्रधर्म होना चाहिए. डॉ. राम मनोहर लोहिया ने प्रत्येक हिंदीभाषी क्षेत्र के निवासी को सलाह दी थी कि वे कम से कम जहां जिस क्षेत्र या प्रदेश में रह रहे हों, वहां की स्थानीय भाषा को सीखें, उसका आदर करें, उसी स्थानीय भाषा को वहां पर बोलचाल में अपनाएं. इसी के साथ समूचे भारत के लोगों को हिंदी अवश्य सीखने की सलाह भी डॉ. लोहिया ने दी थी. आज हिंदी उस जगह पर नहीं है, जहां उसे होना चाहिए था. हिंदीभाषी क्षेत्रों के शहरी इलाक़ों में रहने वाले लोग हिंदी की जगह अंग्रेजी एवं पाश्चात्य सभ्यता को जाने–अनजाने बढ़ावा देते चले आ रहे हैं. हिंदी समूचे राष्ट्र के लिए सम्मान की प्रतीक होनी चाहिए, परंतु ऐसा हो नहीं पा रहा है.

अंग्रेजों के जाने के पश्चात भी अंग्रेजपरस्त लोगों की गुलाम मानसिकता के कारण आज़ाद भारत में आज भी निज भाषा गौरव का बोध परवान नहीं चढ़ पा रहा है. जगह–जगह यानी हर शहर एवं क़स्बे में अंग्रेजी में लिखे बोर्ड देखकर इस भाषाई पराधीनता की वस्तुस्थिति को समझा जा सकता है. आज की शिक्षा बच्चों के लिए बोझ सदृश्य हो गई है. वर्तमान शिक्षा में अंग्रेजी के अनावश्यक महत्व ने आमजन एवं ग़रीबों के बच्चों के विकास को बाधित कर रखा है. जो ग़रीब का बच्चा, आम आदमी का बच्चा हिंदी या अपनी किसी अन्य मातृभाषा में शिक्षा ग्रहण करता है, उसे अपने आप शैक्षिक रूप से पिछड़ा मान लिया जाता है. अंग्रेजी भाषा का झुनझुना उसके हाथों में पकड़ा कर उसके बोल कानों में जबरन डाले जाते हैं. वह बेबस बच्चा दोहरी पढ़ाई करता है यानी एक तो शिक्षा ग्रहण करना और दूसरे पराई भाषा को भी पढ़ना. उस पर अंग्रेजपरस्त लोगों का यह कहना कि अंग्रेजी एक वैश्विक भाषा है, इसका महत्व किसी भी स्थानीय भाषा के महत्व से ज़्यादा है, गुलाम मानसिकता का द्योतक है. इसी गुलाम मानसिकता वाले अंग्रेजपरस्त लोगों ने अंग्रेजी भाषा को आज प्रतिष्ठा का विषय बना लिया है. जबकि सत्य यह है कि आज लोग इस भ्रम में अपने बच्चों को अंग्रेजी की शिक्षा दिलाना चाहते हैं कि अंग्रेजी सीखने के बाद जीविका के तमाम अवसर मिल जाएंगे. दरअसल किसी भी भाषा के बढ़ने के कारकों में सर्वाधिक महत्वपूर्ण बात यह हो गई है कि उस भाषा का प्रत्यक्ष लाभ आदमी को रोजी–रोटी कमाने में मिले. जिस भाषा से ज्ञान और शिक्षा को संगठित करके रोज़गारपरक बना दिया जाता है, वह भाषा आमजन के मध्य लोकप्रिय होती जाती है. आज भारत की भाषाओं पर एक सोची–समझी रणनीति के तहत अंग्रेजी थोप दी गई है. जीविका को अंग्रेजी भाषा का आश्रित बनाकर भारत के लोगों को मानसिक तौर पर गुलाम बना लिया गया है. आज पूरे विश्व में भारत ही एकमात्र ऐसा देश है, जहां के निवासियों को अपनी भाषा में बातचीत करने या लिखने–पढ़ने में भी शर्म आने लगी है. भारत के मूल निवासी अधकचरी अंग्रेजी बोलने में गर्व महसूस करते हैं.

हम अंग्रेजी भाषा के ज्ञान को कतई ग़लत नहीं मानते. किसी भी भाषा का ज्ञान व्यक्ति के व्यक्तिगत विकास एवं योग्यता के लिए बहुत आवश्यक होता है, लेकिन जब किसी भाषा को किसी देश की मातृभाषा–स्थानीय भाषा पर थोपा जाता है, तब कष्ट होता है. भारत के लोगों को भी चीन, जापान, रूस, फ्रांस एवं स्पेन आदि देशों के लोगों की तरह अंग्रेजी को सिर्फ़ एक साधारण भाषा के तौर पर ही लेना चाहिए. भाषा ज्ञान का पर्यायवाची नहीं होती है. कोई भी राष्ट्र अपनी भाषा में तरक़्क़ी के बेमिसाल मापदंड स्थापित कर सकता है, इसके जीवंत उदाहरण जापान, अमेरिका एवं चीन आदि देश हैं.

अरविंद विद्रोही
feedback@chauthiduniya.com

माइक्रोसॉफ्ट की नीति यह है कि जो बच्चे कंप्यूटर की पढ़ाई करते हैं, उन्हें माइक्रोसॉफ्ट के ऑपरेटिंग सिस्टम और सॉफ्टवेयर से रूबरू कराया जाए, जिससे ओपन सोर्स ऑपरेटिंग सिस्टम की पहुंच लोगों तक कम से कम हो.

माइक्रोसॉफ्ट की असलियत और हमारी सरकार

रीतिका सोनाली

कंप्यूटर के आविष्कार ने विश्व में क्रांति ला दी है. मौजूदा दौर में जीवन का कोई भी ऐसा क्षेत्र नहीं है, जहां कंप्यूटर का इस्तेमाल नहीं हो रहा है. विकसित देशों के साथ विकासशील देश भी कंप्यूटर के ज़रिए सभी कामों को आसान बनाने के लिए इसका प्रशिक्षण गांव-गांव तक पहुंचाने का काम कर रहे हैं. लेकिन हमारे देश में कंप्यूटर शिक्षा का क्षेत्र त्रुटियों, सरकार की अनदेखी और लापरवाही का जीता-जागता उदाहरण है. कंप्यूटर की दुनिया ऑपरेटिंग सिस्टम और सॉफ्टवेयर के मामलों में दो भागों में बंट चुकी है, ओपन सोर्स ऑपरेटिंग सिस्टम और पेड ऑपरेटिंग सिस्टम. कंप्यूटर सिस्टम को शुरू करने के लिए उसमें डाले जाने वाले ऑपरेटिंग सिस्टम और सॉफ्टवेयर ओपन सोर्स और पेड दोनों होते हैं. ओपन सोर्स सॉफ्टवेयर पूरी तरह से मुफ़्त उपलब्ध है, जबकि पेड सॉफ्टवेयर के लिए ग्राहकों से पैसे लिए जाते हैं. बिज़नेस ऑफ सॉफ्टवेयर एसोसिएशन के अनुसार, 22 प्रतिशत यूजर ओपन सोर्स का इस्तेमाल करते हैं, जबकि 33 प्रतिशत यूजर पाइरेटेड सॉफ्टवेयर इस्तेमाल करते हैं. कंप्यूटर सिस्टम ईज़ाद करने वाले देश अमेरिका ख़ुद को ओपन सोर्स उपभोक्ता साबित करने की ओर क़दम बढ़ा चुका है. अमेरिकी सरकार पूरी तरह से ओपन सोर्स सॉफ्टवेयर का इस्तेमाल करके अपने देश का अरबों डॉलर बचा रही है. अमेरिका का अनुसरण करते हुए भारत और दूसरे देशों को भी इस दिशा में क़दम उठाने की ज़रूरत है. हमारे देश की सरकार और जनता, दोनों ही पेड सॉफ्टवेयर माइक्रोसॉफ्ट का इस्तेमाल करते हैं. इसके चलते अरबों रुपये की राशि माइक्रोसॉफ्ट और आईबीएम जैसी कंपनियों के खाते में जाती है. अपने देश से दूसरे देश में जा रही इस भारी- भरकम रकम को आसानी से ओपन सोर्स ऑपरेटिंग सिस्टम इस्तेमाल करके बचाया जा सकता है. ओपन सोर्स ऑपरेटिंग सिस्टम नि:शुल्क उपलब्ध है, जिसे इंटरनेट से डाउनलोड करके या बाज़ार में सॉफ्टवेयर वेंडर से लेकर अपने सिस्टम में इस्तेमाल किया जा सकता है. ओपन सोर्स का मतलब है, जिस सॉफ्टवेयर का कोड इंटरनेट पर फ्री उपलब्ध है, जिसे कोई भी डाउनलोड कर सकता है और अपनी ज़रूरत के हिसाब से उसमें थोड़े-बहुत बदलाव भी किए जा सकते हैं.

दूसरी ओर माइक्रोसॉफ्ट का पेड यानी सशुल्क ऑपरेटिंग सिस्टम और सॉफ्टवेयर भी है, जिसे हम विंडोज के नाम से जानते हैं. भारत अभी भी विकासशील देशों में शुमार होता है, यहां ग़रीबी है, संसाधनों की कमी है. हैरानी की बात यह है कि हमारे यहां ओपन सोर्स सिस्टम के बारे में न तो जानकारी दी जाती है और न ही इसके लिए प्रशिक्षण की कोई व्यवस्था है. दक्षिण अमेरिका व यूरोप के देशों और ऑस्ट्रेलिया में ओपन सोर्स के शिक्षण-प्रशिक्षण पर ख़ूब ज़ोर दिया जा रहा है. वहां माइक्रोसॉफ्ट के सॉफ्टवेयर और ऑपरेटिंग सिस्टम के बजाय ओपन सोर्स की पढ़ाई होती है. इतनी आसानी से ओपन सोर्स ऑपरेटिंग सिस्टम उपलब्ध होने के बावजूद हमारे देश में माइक्रोसॉफ्ट के ऑपरेटिंग सिस्टम और सॉफ्टवेयर ही प्रचलित हैं. इसकी कई वजहें हैं, लेकिन सबसे बड़ी वजह है हमारे देश का सरकारी तंत्र. दरअसल, माइक्रोसॉफ्ट का सबसे बड़ा ग्राहक हमारी सरकार है. हमारे देश के सरकारी दफ्तरों में इस्तेमाल होने वाले कंप्यूटर्स में माइक्रोसॉफ्ट का विंडोज ऑपरेटिंग सिस्टम इस्तेमाल होता है. यानी हर साल जितने भी कंप्यूटर सरकारी दफ्तरों के लिए ख़रीदे जाते हैं, उनके लिए माइक्रोसॉफ्ट का ऑपरेटिंग सिस्टम ख़रीदा जाता है. हमारे देश में भ्रष्टाचार की जो हालत है, उसमें इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता है कि माइक्रोसॉफ्ट सरकारी विभागों के आला अधिकारियों की जेबें गर्म कर अपना प्रोडक्ट बेचने में सफल होता है.

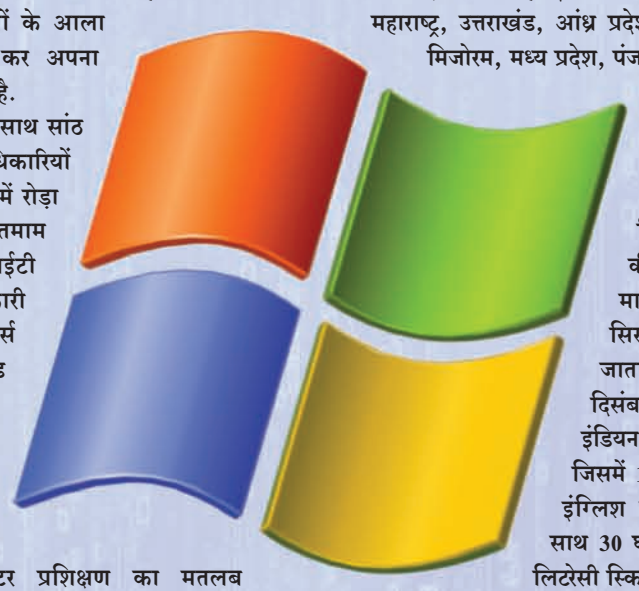

इसी तरह माइक्रोसॉफ्ट के साथ सांठ गांठ कर शिक्षा विभाग के अधिकारियों ने देश के युवाओं के विकास में रोड़ा अटकाया है. देश के तमाम एआईसीटीई प्रमाणित आईटी इंस्टीट्यूट्स में सरकारी अधिकारियों ने ओपन सोर्स सॉफ्टवेयर के एप्लीकेशन एंड ऑपरेशन की जगह माइक्रोसॉफ्ट सॉफ्टवेयर के एप्लीकेशन एंड ऑपरेशन पढ़ाने का नियम तय कर रखा है. देश के सभी शिक्षण संस्थानों में कंप्यूटर प्रशिक्षण का मतलब माइक्रोसॉफ्ट सॉफ्टवेयर के एप्लीकेशन एंड ऑपरेशन का प्रशिक्षण. यही वजह है कि ओपन सोर्स की पहुंच आम लोगों तक नहीं हो पाई है. माइक्रोसॉफ्ट की नीति यह है कि जो बच्चे कंप्यूटर की पढ़ाई करते हैं, उन्हें माइक्रोसॉफ्ट के ऑपरेटिंग सिस्टम और सॉफ्टवेयर से रूबरू कराया जाए, जिससे ओपन सोर्स ऑपरेटिंग सिस्टम की पहुंच लोगों तक कम से कम हो. इसके लिए माइक्रोसॉफ्ट अपने प्रचार और मार्केटिंग पर काफ़ी पैसे ख़र्च करता है. माइक्रोसॉफ्ट के मालिक बिल गेट्स और कंपनी के अन्य अधिकारी प्रतिवर्ष भारत आकर कभी कैंसर मरीज़ों के बहाने तो कभी बिहार के किसी गांव को गोद लेने के बहाने यहां के राजनेताओं और अधिकारियों को फांसने की कोशिश करते हैं. गांव-गांव में जाकर मुफ्त में बांटे गए कंप्यूटरों के तहत यह नीति होती है कि उनमें इनबिल्ट माइक्रोसॉफ्ट के सॉफ्टवेयर और ऑपरेटिंग सिस्टम से लोग रूबरू हो सकें. सभी कंप्यूटरों में माइक्रोसॉफ्ट के विंडोज पहले से इंस्टॉल होते हैं.

शिक्षा प्रोजेक्ट्स के तहत माइक्रोसॉफ्ट आईटी शिक्षा का विस्तार करने के बहाने करोड़ों रुपये का फंड भारत के विभिन्न संस्थाओं को देता है. इसका असली मक़सद यह होता है कि कंप्यूटर शिक्षा में माइक्रोसॉफ्ट के ऑपरेटिंग सिस्टम विंडोज का प्रशिक्षण देश के कोने-कोने तक पहुंचाया जा सके. वर्ष 2004 में माइक्रोसॉफ्ट द्वारा लांच किए गए प्रोजेक्ट ज्योति को 2007 में दिए गए आठ करोड़ रुपये के फंड के अलावा 27 करोड़ की क़ीमत के सॉफ्टवेयर देश के दूरदराज इलाक़ों में मुफ़्त बांटे गए. यह राशि देश के चार ग़ैर सरकारी संस्थानों दृष्टि फाउंडेशन, डेवलपमेंट अल्टरनेटिव्स, ग्रामीण संचार सोसाइटी और इंडियन सोसायटी ऑफ एग्रीबिजनेस प्रोफेशनल्स को मिली, जिन्हें ग्रामीण भारत में कम्युनिटी टेक्नोलॉजी लर्निंग सेंटर स्थापित करने का ज़िम्मा दिया गया था. प्रोजेक्ट ज्योति में माइक्रोसॉफ्ट अब तक 47 करोड़ रुपये ख़र्च कर चुकी है. इस प्रोजेक्ट के तहत देश के 20 राज्यों और यूनियन टेरिटरी में इसका फैलाव 14 ग़ैर सरकारी संस्थानों द्वारा हो चुका है. इसके तहत बेरोज़गार युवाओं, अधिकारहीन महिलाओं और ग्रामीण लोगों को शिक्षित करने की योजना है, ताकि उन्हें रोज़गार पाने में आसानी हो. इन संस्थाओं के साथ मिलकर माइक्रोसॉफ्ट ने अपने ऑपरेटिंग सिस्टम को लोगों के बीच मुफ्त बांटकर अपनी छवि एक ऐसी कंपनी की बना ली, जो भारत और अन्य विकासशील देशों की जनता के उत्थान के लिए कार्य करती है, लेकिन यह माइक्रोसॉफ्ट की एक चाल है और लोगों को केवल माइक्रोसॉफ्ट के ऑपरेटिंग सिस्टम एंड एप्लीकेशंस की पढ़ाई ही कराई जाती है. इसी तरह से भारत सरकार प्रोजेक्ट शिक्षा, जिसके तहत देश भर के सरकारी स्कूलों के शिक्षक और विद्यार्थियों को कंप्यूटर प्रशिक्षण दिया जाता है, उसमें भी माइक्रोसॉफ्ट अहम भूमिका निभा रहा है. इस प्रोजेक्ट के तहत आईटी पाठ्यक्रम में सॉफ्टवेयर सोल्यूशन को शामिल करने के अलावा शिक्षकों-छात्रों को स्कॉलरशिप प्रदान करने और देश के ग्रामीण हिस्सों में बच्चों एवं शिक्षकों को कंप्यूटर से रूबरू कराने की योजना बनाई थी. माइक्रोसॉफ्ट और भारत सरकार के इस पार्टनरशिप के तहत भी माइक्रोसॉफ्ट के ऑपरेटिंग सिस्टम का ही प्रशिक्षण दिया जाता है. इसके प्रथम चरण में देश के 12 राज्यों महाराष्ट्र, उत्तराखंड, आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, गुजरात, बिहार, मिजोरम, मध्य प्रदेश, पंजाब, राजस्थान, तमिलनाडु और उत्तर प्रदेश में सरकारी स्कूलों के 5,12,000 शिक्षकों और 25 मिलियन छात्रों को कंप्यूटर प्रशिक्षण दिया गया है. यही नहीं, देश की सेना के जवानों को भी माइक्रोसॉफ्ट के ऑपरेटिंग सिस्टम का ही प्रशिक्षण दिया जाता है. प्रोजेक्ट क्षमता के तहत 8 दिसंबर 2009 को माइक्रोसॉफ्ट का इंडियन आर्मी के साथ करार हुआ था, जिसमें 110 घंटे की क्लास में बेसिक इंग्लिश स्पीकिंग, सॉफ्ट स्किल्स के साथ 30 घंटे का माइक्रोसॉफ्ट डिजिटल लिटरेसी स्किल्स प्रोग्राम कराने की व्यवस्था है. इस मॉडल के तहत देश भर में फैले भारतीय सेना के 48 सेना प्रशिक्षण केंद्रों में 1000 मास्टर ट्रेनर तैयार करके जवानों को प्रशिक्षण देने की योजना है. यानी देश की सेना में भी माइक्रोसॉफ्ट की पहुंच को नकारा नहीं जा सकता है. माइक्रोसॉफ्ट भारत के ई-गवर्नेंस सोल्यूशंस के साथ पार्टनरशिप में है, जिससे वह केंद्र और राज्य सरकारों के विभिन्न विभागों और सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों से जुड़कर पिछले 17 सालों से लाभ कमा रहा है. माइक्रोसॉफ्ट 14 राज्य सरकारों के साथ पार्टनरशिप में है और अब लगभग 300 एप्लीकेशन माइक्रोसॉफ्ट विंडोज के प्लेटफॉर्म पर चलते हैं. माइक्रोसॉफ्ट की नीतियों का एक अहम हिस्सा यह है कि नया कंप्यूटर ख़रीदने वालों को उसके सॉफ्टवेयर पहले से मिल जाएं. इसके लिए भी माइक्रोसॉफ्ट काफ़ी पैसे ख़र्च करके हार्डवेयर वेंडर से सभी नए कंप्यूटरों में माइक्रोसॉफ्ट इंस्टॉल कराता है, इससे ख़रीददार के पास और कोई विकल्प नहीं रह जाता. दरअसल माइक्रोसॉफ्ट की रणनीति यही है कि उसे अपने प्रोडक्ट को आम आदमी के बीच लोकप्रिय बनाना है, जबकि उसके टारगेट ख़रीददार कोई और हैं. भारत सरकार, लैपटॉप-कंप्यूटर एसेंबलिंग करने और बनाने वाली कंपनियां ही माइक्रोसॉफ्ट के ईमानदार ग्राहक हैं.

इतनी आसानी से ओपन सोर्स ऑपरेटिंग सिस्टम उपलब्ध होने के बावजूद हमारे देश में माइक्रोसॉफ्ट के ऑपरेटिंग सिस्टम और सॉफ्टवेयर प्रचलित हैं. इसकी कई वजहें हैं, लेकिन सबसे बड़ी वजह यह है कि माइक्रोसॉफ्ट किसी भी नए ऑपरेटिंग सिस्टम और सॉफ्टवेयर को लांच करने के बाद उसे ग्राहकों को बाद में बेचता है, उससे पहले बाज़ार में और इंटरनेट पर पाइरेटेड कॉपियां उपलब्ध हो जाती हैं. कंप्यूटर रखने वाले लोग नए ऑपरेटिंग सिस्टम और सॉफ्टवेयर की उपलब्धता देखकर फटाफट अपने पास इंस्टॉल कर लेते हैं. अपने सॉफ्टवेयर को आम लोगों के बीच उपलब्ध कराने का माइक्रोसॉफ्ट के पास कोई दूसरा ज़रिया नहीं है. आम यूजर्स के बीच अपनी साख बनाए रखने के लिए माइक्रोसॉफ्ट अपने ही सॉफ्टवेयर का पाइरेटेड वर्जन इंटरनेट पर उपलब्ध कराता है, जिससे लोग आसानी से उसे पा सकें और फिर उनका ध्यान किसी अन्य सॉफ्टवेयर पर न जा पाए. पाइरेटेड वर्जन निकाल कर माइक्रोसॉफ्ट बाज़ार में अपना कंप्टीशन ख़त्म करता है और फिर पाइरेसी रोकने के नाम पर विंडोज जेनविन एडवांटेज एप्लीकेशन के सहारे लोगों की निजी जानकारियों को लीक करता है. विंडोज जेनविन एडवांटेज एप्लीकेशन से पाइरेटेड यूजेज का पता लगाया जा सकता है. माइक्रोसॉफ्ट नियमित तौर पर यूजर्स को ऑपरेटिंग सिस्टम के अपग्रेडेड विकल्प उपलब्ध कराता रहता है, जिसे यूजर्स को मज़बूरन अपनाना पड़ता है. यह पुराने वर्जन के सॉफ्टवेयर का सपोर्ट हटाकर नए सॉफ्टवेयर और ऑपरेटिंग सिस्टम अपनाने पर मजबूर करता है. इस तरह यूजर्स को ज़बरदस्ती अपडेटेड वर्जन अपने कंप्यूटर में इंस्टॉल करना पड़ता है. इसी तरह माइक्रोसॉफ्ट अपने नियमित ग्राहकों, जैसे भारत सरकार और दूसरी कंपनियों को एक ही प्रोडक्ट बार-बार बेचता है. अपडेटेड वर्जन न अपनाने पर माइक्रोसॉफ्ट अपने पुराने वर्जन को लॉक कर देता है, जिससे उसका इस्तेमाल मुश्किल हो जाता है.

ritika@chauthiduniya.com

कमज़ोर सिक्योरिटी

विंडोज की सिक्योरिटी पर संदेह तो वर्षों से किया जा रहा है. माइक्रोसॉफ्ट की कमज़ोर सिक्योरिटी से दुनिया भर में यूजर्स भी परेशान हैं, लेकिन सॉफ्टवेयर सीक्रेट होने की वजह से कोई इसकी सिक्योरिटी को एक्सेस नहीं कर सकता. एंटी वायरस के मार्केट के लिए भी माइक्रोसॉफ्ट ही ज़िम्मेदार है. यह अपने ही सॉफ्टवेयर को करप्ट करने के लिए वायरस बनाकर लोगों तक पहुंचा देता है और फिर एंटी वायरस बनाकर लोगों को अपने कंप्यूटर की सिक्योरिटी के लिए आगाह करता है. थोड़े-थोड़े समय के अंतराल पर माइक्रोसॉफ्ट अपडेटेड एंटी वायरस लाकर मज़बूत सिक्योरिटी के दावे के साथ बाज़ार में बेचता है और इस तरह माइक्रोसॉफ्ट का प्रोडक्ट लोगों तक पहुंचता रहता है. ऐसे में लोग अन्य विकल्प की ओर कम ही जाते हैं.

माइक्रोसॉफ्ट और पाइरेसी

आमतौर पर माइक्रोसॉफ्ट का एक सॉफ्टवेयर 7000 रुपये में आता है. इस सॉफ्टवेयर को ख़रीदना आम कंप्यूटर यूजर की पहुंच से बाहर है. इतना महंगा सॉफ्टवेयर या तो सरकार ख़रीद सकती है या फिर कोई कंपनी, जहां से इसकी पाइरेटेड कॉपी आम आदमी के लिए हासिल करना काफ़ी मुश्किल है. फिर भी माइक्रोसॉफ्ट का कोई भी सॉफ्टवेयर लांच होने के साथ ही इंटरनेट या सॉफ्टवेयर वेंडर के पास उपलब्ध होता है. ऐसा कैसे होता है? विश्व की सबसे अग्रणी कंपनी क्या अपनी तकनीकी सुरक्षा को लेकर इतनी ग़ैर ज़िम्मेदार हो सकती है? क्या पाइरेसी के इस तंत्र को रोका नहीं जा सकता, जिससे सॉफ्टवेयर बनाने वाली कंपनी को ही नुक़सान पहुंचता है. दरअसल माइक्रोसॉफ्ट ही पाइरेसी के लिए भी ज़िम्मेदार है.

विज्ञापन हेतु संपर्क करें : email : advt@chauthiduniya.com

मणिपुर में खेलों के नाम पर सुविधाएं न के बराबर हैं. राज्य में चल रही राजनीतिक उथल-पुथल अगर कुछ हद तक सुधर जाए तो देश की शान बढ़ाने वाले खिलाड़ियों की संख्या और बढ़ सकती है.

नायकों को सलाम

सोना मिला, सोने जैसे खिलाड़ी भी

गीता

अनीशा सैद

प्रजुषा मल्लिकल

सुशील कुमार

योगेश्वर दत्त

राजेंदर कुमार

38 स्वर्ण, 27 रजत और 36 कांस्य यानी कुल 101 पदक. यह है 19वें राष्ट्रमंडल खेल में भारत की तस्वीर. खेलों के आठ दशकों के इतिहास में पहली बार भारत ने राष्ट्रमंडल खेल में दूसरा स्थान हासिल किया. शानदार प्रदर्शन और खेलों के सफल आयोजन का सेहरा अपने-अपने सिर बांधने की प्रतिस्पर्धा में शीला दीक्षित और सुरेश कलमाडी की ज़ुबान थक नहीं रही है, लेकिन हम आपको इस सबसे एक अलग कहानी बताते हैं. यह कहानी है कॉमनवेल्थ के पोस्टर को फाड़कर निकले उन नायकों की, जिन्होंने पदकों की बौछार करने में अपना पसीना बहाया है. इनमें से ज़्यादातर नायक दूरदराज के गांवों में रहने वाले वे खिलाड़ी हैं, जिनके पास न तो बेहतर सुविधा है, न प्रशिक्षक हैं और न ही प्रायोजक. इनके सामने कई मुश्किलें थीं. घर की आर्थिक हालत जर्जर है, परिवारीजनों का समर्थन नहीं है, रोजी-रोटी के लिए नौकरी करनी है. इसके बावजूद इन्होंने वह कर दिखाया, जो पिछले 80 सालों में कभी नहीं हुआ था. ये अपने दम पर खेले. भारत एवं भारतीयों को गर्व और ख़ुशियों की सौगात दी.

तीरंदाजी में सोना जीतने वाली 16 वर्षीय दीपिका कुमारी झारखंड के एक छोटे से गांव रतुचेती में रहती हैं. उनके पिता रांची में ऑटो रिक्शा चलाते हैं. इसके बावजूद खुद कुछ कर जाने की जिद ने दीपिका को इस मुकाम तक पहुंचाया. वहीं दस हज़ार मीटर की दौड़ में कांस्य पदक जीतने वाली कविता राउत नासिक के एक गांव से हैं. उन्होंने धावक बनने का फ़ैसला इसलिए किया ,क्योंकि वह नंगे पैर दौड़ सकती थीं. इतने पैसे नहीं थे कि जूते खरीद सकें. तैराकी में विकलांग खिलाड़ी प्रशांत ने दिखाया कि बिना सुविधाओं के अगर वह कांस्य जीत सकते हैं तो सुविधाएं मिलने पर क्या कर सकते हैं. हरियाणा में भिवानी के एक छोटे से गांव की गीता कुश्ती में स्वर्ण जीतने वाली पहली महिला रहीं. उनकी बहन बबीता 51 किलोग्राम फ्री स्टाइल कुश्ती में रजत मिलने पर कह रही थीं कि वह लाज नहीं रख पाईं. इसी तरह लंबी कूद में रजत पदक लेने वाली प्रजुषा के पिता त्रिचूर में रसोइया थे, लेकिन अब बेरोज़गार हैं. इस बेकारी की हालत में भी प्रजुषा के हौसले पस्त नहीं हुए. जिमनास्टिक में रजत और कांस्य पदक जीतने वाले आशीष कुमार और हॉकी में पाकिस्तान के ख़िलाफ़ गोल करने वाले दानिश इलाहाबाद के हैं और बहुत ही साधारण पृष्ठभूमि वाले परिवारों से ताल्लुक रखते हैं. इन दोनों ने इस भ्रांति को झुठलाया कि राष्ट्रमंडल में खेलने और जीतने के लिए किसी बड़े घराने का होना जरूरी है. ऐसा ही एक नाम मुक्केबाजी में भी आता है. छोटा टायसन के नाम से मशहूर मणिपुरी बॉक्सर सुरंजय सिंह भी साधारण परिवार से होने के बावजूद भारत को स्वर्ण पदक दिलाने में कामयाब रहे. मणिपुर से ही एक और भारोत्तोलक का नाम लेना बहुत ज़रूरी है. 58 किलोग्राम वर्ग में भारोत्तोलन में देश की झोली में स्वर्ण डालने वाली रेणु बाला का करियर कई कठिन रास्तों और लंबे संघर्ष से गुज़रा है. बताते हैं कि वह संघर्ष के दिनों में बस कंडक्टर का काम भी कर चुकी हैं. यहां तक पहुंचने में उनके जज़्बे का ही कमाल है. 64 किलोग्राम वर्ग की मुक्केबाजी में मनोज कुमार ने भी भारत को स्वर्ण से नवाज़ा. ऐसे ही कई नाम हैं, जिन्होंने बगैर सुविधा और सहयोग के देश को कई पदक दिलाए. मसलन मुक्केबाजी में परमजीत समोटा, कुश्ती में सुशील कुमार, सेंटर फायर पिस्टल में हरप्रीत सिंह, कुश्ती में ही अनिल कुमार, अनीता और अलका. स्वर्ण की बात हो और हरियाणा का नाम न आए, नामुमकिन है. ज़्यादातर विजेता खिलाड़ी हरियाणा से हैं. कुछ लोग तो राष्ट्रमंडल खेलों को हरियाणा का खेल तक कह रहे हैं.

> **कीर्तिमान यही खिलाड़ी बनाएंगे, जो सुविधारहित संसार से आए हैं. इन खिलाड़ियों के जज़्बे को सलाम.**

ग़ौर करने वाली बात है कि तीरंदाजी, जिमनास्टिक और पैरा स्वीमिंग में भारत को इससे पहले राष्ट्रमंडल खेलों में पदक नहीं मिला. इनमें पदक जीतने वाले ज़्यादातर विजेता अनजान गांवों और क़स्बों से आए हैं. दूसरी सबसे बड़ी बात है कि ये खिलाड़ी उन खेलों में पदक ला रहे हैं, जो ग्लैमरस स्पर्धाओं की श्रेणी से बाहर है. यह संतोष की बात है कि गांवों में रहने वाले सुविधाहीन खिलाड़ियों ने कई पदक जीते हैं, लेकिन असल समस्या यह है कि इन खेलों के बाद हम उन्हें फिर भुला देंगे. हरियाणा एवं झारखंड सरकार से सबक लेते हुए केंद्र और अन्य राज्य सरकारों को चाहिए कि वे इन खिलाड़ियों को उचित सुविधा देकर ओलंपिक के लिए तैयार करें. अगले राष्ट्रमंडल खेल स्कॉटलैंड में होंगे. हमें यह मानकर चलना चाहिए कि यह तो महज़ शुरुआत है, अभी कई कीर्तिमान बनाने बाकी हैं और ये कीर्तिमान यही खिलाड़ी बनाएंगे, जो सुविधा और सहयोगरहित संसार से आए हैं. बहरहाल, इन खिलाड़ियों के जज़्बे को सलाम.

राजेश एस कुमार
rajeshy@chauthiduniya.com

सभी फोटो-*सुनील मल्होत्रा*

बबिता

दीपिका

अलका तोमर

परमजीत समोटा

मनोज कुमार

नरसिंह यादव

रवींदर सिंह

मणिपुर : इंडिया का स्पोर्ट्सवेल्थ

एल. सुरंजय बोम्बेला चनु रेणुबला चनु

एस. बिजेन सिंह

राष्ट्रमंडल खेलों में मणिपुर का जलवा सबने देखा. जिस अंदाज़ में इस राज्य के खिलाड़ियों ने पदक पर पदक जीते, उसे देखते हुए इस राज्य को स्पोर्ट्स का पावर हाउस कहना ग़लत नहीं होगा. भले ही मणिपुर आतंकवाद और अभावों से ग्रस्त हो, फिर भी देश की शान बढ़ाने में यहां के खिलाड़ियों ने कोई कोर-कसर बाक़ी नहीं रखी. 19वें राष्ट्रमंडल खेल के पहले दिन ही पदकों का खाता भारोत्तोलन के नाम खुला. मणिपुरी बाला सोनिया चनु ने भारोत्तोलन में रजत पदक जीता. यह देश के लिए गर्व का मौक़ा था. राष्ट्रमंडल खेल में रेणुबला चनु, सोनिया चनु, संध्या रानी चनु, मोनिका देवी, बोम्बेला चनु, भाग्यवती और सुरंजय आदि ने पदक जीतकर पदक तालिका में भारत को दूसरा स्थान दिला दिया.

मणिपुर के अधिकतर खिलाड़ी निम्न-मध्यमवर्गीय परिवारों से आते हैं. भारोत्तोलक रेणुबला चनु की पारिवारिक स्थिति बहुत कमज़ोर थी. अपना परिवार चलाने के लिए उसे बस में कंडक्टरी तक करनी पड़ी थी. 58 किलो वर्ग में स्वर्ण पदक जीतने वाली भारोत्तोलक रेणु कहती हैं कि मैं दिन में तीन बार अभ्यास करती हूं. यही नहीं, वो रात में भी अभ्यास करती हैं. 52 किलो वर्ग के मुक्केबाज़ सुरंजय एशिएन चैंपियन भी हैं. बॉक्सिंग की दुनिया में छोटा टायसन के नाम से प्रसिद्ध सुरंजय मार्च 2009 से आज तक यानी एक साल के सफर में अंतरराष्ट्रीय स्तर पर लगातार छह स्वर्ण पदक जीत चुके हैं. राष्ट्रमंडल खेलों में भी सुरंजय ने भारत के लिए एक स्वर्ण पदक जीता यानी एक साल में सात स्वर्ण पदक.

डोपिंग मामले में फंस चुकी भारोत्तोलक मोनिका को 75 किलो वर्ग में कांस्य से ही संतुष्ट होना पड़ा. मोनिका 2008 के ओलंपिक में डोपिंग के चलते खेल नहीं पाई थी. उसकी जगह शैलजा पुजारी को चुना गया था. कुल मिलाकर मणिपुर के 16 खिलाड़ियों ने 19वें राष्ट्रमंडल खेलों में हिस्सा लिया था. उनमें से सात खिलाड़ियों ने सफलता हासिल की. भारत सरकार ने राज्य के खिलाड़ियों का स्वागत किया. इंडियन ओलंपिक एसोसिएशन (आईओए) ने भी मणिपुर के खिलाड़ियों का सम्मान किया. रेणुबला की पहली कोच एल अनीता चनु कहती हैं कि अगर हमारे राज्य में शांति आ जाए तो हर जगह हमारे ही खिलाड़ी दिखेंगे. हमारे खिलाड़ियों को जो सफलता मिल रही है, उससे हमारे राज्य में लड़कियां ज़्यादा से ज़्यादा खेलों की दुनिया में आना चाह रही हैं, लेकिन बात वहीं राज्य के अशांतिपूर्ण माहौल पर आकर टिक जाती है. अनीता अब तक सोनिया चनु, संध्या रानी चनु और रेणुबला आदि कई खिलाड़ियों को वेट लिफ्टिंग का शुरुआती प्रशिक्षण दे चुकी हैं.

मणिपुर में खेलों के नाम पर सुविधाएं न के बराबर हैं. राज्य में चल रही राजनीतिक उथल-पुथल अगर कुछ हद तक सुधर जाए तो देश की शान बढ़ाने वाले खिलाड़ियों की संख्या और बढ़ सकती है. अगले ओलंपिक तक और भी अच्छे खिलाड़ी आ सकते हैं. ऐसे में खिलाड़ियों को समुचित सुविधा देने के लिए बेहतर सरकारी नीति की ज़रूरत है. ग़रीबी और राजनीतिक उठापठक की वजह से मणिपुर की क्या हालत है, यह किसी से छुपा नहीं है. बावजूद इसके यहां के लोगों और खिलाड़ियों के मन में देश का नाम रोशन करने का जज़्बा कम नहीं हुआ है.

bijen@chauthiduniya.com

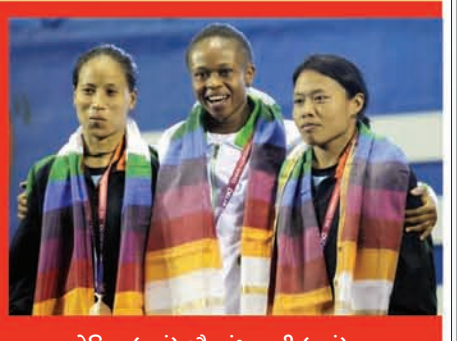

मोनिका देवी

सोनिया (बाएं) और संध्यारानी (दाएं)

सप्ताह की सबसे बड़ी पॉलिटिकल इनसाइड स्टोरी

दो टूक

शनिवार रात 8 : 30 बजे
रविवार शाम 6 : 00 बजे
ईटीवी के सभी हिन्दी चैनलों पर

Postal Regn. No. DL/ND-11/6139/2009-11, RNI No. 45843/86

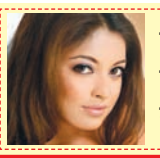

तनुश्री कभी रोमांटिक रोल में दर्शकों के दिलों की धड़कनें बढ़ाती नज़र आईं तो कभी हंसाते हुए.

मल्लिका की वापसी

साधारण शक्ल-ओ-सूरत वाली मल्लिका ने जब फिल्म इंडस्ट्री में क़दम रखा तो किसी को उम्मीद नहीं थी कि वह अपनी अदाओं से बॉलीवुड के साथ-साथ हॉलीवुड को भी अपना दीवाना बना लेगी. हालांकि शुरुआती दौर में मल्लिका ने ख़ुद को स्थापित करने के लिए बयानबाज़ी का सहारा लिया, लेकिन अब वह बॉलीवुड की स्थापित अभिनेत्रियों में गिनी जाती हैं. मल्लिका इधर पिछले कुछ दिनों से बॉलीवुड से ग़ायब थीं.

बताया जाता है कि वह किसी हॉलीवुड प्रोजेक्ट में व्यस्त थीं, लेकिन जैसे ही उन्हें एहसास हुआ कि बॉलीवुड से दूरी उनके करियर के लिहाज़ से ठीक नहीं है और बॉलीवुड के प्रति हॉलीवुड अभिनेत्रियों का रुझान लगातार बढ़ता जा रहा है, उन्हें अपना घर याद आने लगा. मल्लिका जानती हैं कि इंडस्ट्री में टिके रहने के लिए किसी न किसी बहाने चर्चा में रहना ज़रूरी है. यह सोचकर उन्होंने कुछ दिनों पहले सोशल नेटवर्किंग साइट ट्वीटर में अपनी टॉपलेस फोटो लगा दी. फिर वही हुआ, जो मल्लिका चाहती थीं.

फ़िलहाल आजकल वह अपनी फिल्म हिस्स के प्रचार में लगी हुई हैं. गौरतलब है कि यह फिल्म नाग-नागिन की कहानी पर आधारित है. इस फिल्म की चर्चा तभी से है, जब इसके निर्माण की घोषणा हुई थी. जब मल्लिका को यह फिल्म ऑफर हुई थी, तब उनका कहना था कि वह ज़्यादातर हॉलीवुड प्रोजेक्ट पर ही काम करना पसंद करेंगी. यह वह दौर था, जब उनकी हॉलीवुड फिल्म द मिथ रिलीज हुई थी. सब जानते हैं कि इस फिल्म में उनके साथ अंतराष्ट्रीय सुपर स्टार जैकी चैन काम कर रहे थे. इसी फिल्म की बदौलत वह कमल हासन की फिल्म दशावतारम के प्रोमोशनल इंवेट में जैकी चैन को बतौर गेस्ट भारत लाई थीं, लेकिन अब समय बदल चुका है. हिस्स में वह सारा मसाला मौजूद है, जो एक हिंदी कमर्शियल फिल्म में होता है. मल्लिका ने इस फिल्म में जमकर एक्सपोज़ किया है. उन्हें उम्मीद है कि यह फिल्म दर्शकों को ज़रूर पसंद आएगी. आदत से मजबूर मल्लिका ने यहां भी अपनी फिल्म और ख़ुद के प्रचार के लिए प्रियंका चोपड़ा को विवाद में घसीट लिया.

उन्होंने ट्वीटर के ज़रिए प्रियंका पर आरोप लगाया कि रियलिटी शो खतरों के खिलाड़ी में अपनी गर्दन पर सांप लपेट कर प्रियंका ने उनकी नकल की है. मालूम हो कि फिल्म मर्डर में बोल्ड सीन देने के बाद मल्लिका सेक्स सिंबल के रूप में बॉलीवुड में छा गई थीं. प्ले ब्वॉय जैसी पत्रिका ने अपने कवर के लिए उन्हें न्यूड सीन का ऑफर दिया था. जून 2007 में हांगकांग की एक प्रसिद्ध पत्रिका ने मल्लिका को एशिया के 100 ख़ूबसूरत लोगों में से एक बताया था. उनके प्रशंसकों के लिए ख़ुशख़बरी यह है कि वह फिल्म हिस्स के बाद भी सक्रिय रूप से बॉलीवुड में काम करती रहेंगी. वह जल्द ही इंद्र कुमार की फिल्म धमाल के सिक्वल में भी नज़र आने वाली हैं.

तनुश्री का क़िस्मत कनेक्शन

हॉट तनुश्री अपनी पहली ही फिल्म में बोल्ड सीन देकर बॉलीवुड में छा गई थीं. यूं तो उनकी पहली फिल्म चॉकलेट थी, पर उससे पहले रिलीज हुई फिल्म आशिक बनाया आपने. यह फिल्म लव ट्रेंगल पर आधारित थी. इसमें उनके अपोजिट इमरान हाशमी थे. उनकी भूमिका एक कॉलेज स्टूडेंट स्नेहा की थी और उन्होंने जमकर अंग प्रदर्शन किया. इसके बाद उनकी फिल्म चॉकलेट आई, जिसमें उनकी भूमिका बिल्कुल अलग थी. फिर वह कॉमेडी फिल्मों की तरफ़ मुड़ी और भागमभाग एवं ढोल जैसी फिल्मों में काम किया. हालिया रिलीज फिल्म अपार्टमेंट में तनुश्री ने अच्छा अभिनय किया, पर दर्शकों का ख़ास अटेंशन नीतू चंद्रा ले गईं. तनुश्री ने जिस तरह हिंदी फिल्म इंडस्ट्री में क़दम रखा था, उसे देखकर यही माना जा रहा था कि वह नेक्स्ट जेनरेशन की स्थापित नायिकाओं में शुमार होंगी.

जमशेदपुर की रहने वाली तनुश्री ने अपनी शिक्षा-दीक्षा पुणे में पूरी की. कॉमर्स में ग्रेजुएशन करने के बाद तनुश्री ने इवेंट मैनेजमेंट सेक्टर में काम भी किया. उनके पिता इंश्योरेंस सेक्टर में काम करते हैं और मां एक कुशल गृहिणी. 2004 में तनुश्री ने मिस यूनिवर्स प्रतियोगिता के लिए भारत का प्रतिनिधित्व किया था. फिर उन्हें बॉलीवुड भाने लगा और वह यहीं की होकर रह गईं. तनुश्री कभी एक ही तरह की भूमिका में बंधकर नही रहीं. उन्होंने कई तरह की भूमिकाएं कीं. कभी वह रोमांटिक रोल में दर्शकों के दिलों की धड़कनें बढ़ाती नज़र आईं तो कभी हंसाते हुए. इन तमाम विविधताओं के बावजूद वह बॉलीवुड की टॉप अभिनेत्रियों में अपनी जगह नहीं बना पाईं. शायद तनुश्री की क़िस्मत उनका साथ नहीं दे रही है और इसीलिए वह आज तक किसी गंभीर भूमिका से दूर हैं, जबकि उनके बाद की कई अभिनेत्रियां उनसे आगे निकल गईं.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

प्रीव्यू

एक्शन री-प्ले

बॉलीवुड को कई सफल फिल्में दे चुके निर्देशक विपुल शाह और अक्षय कुमार की जोड़ी एक बार फिर साथ आ रही है फिल्म एक्शन री-प्ले में. फिल्म आखें के बाद एक बार फिर ऐश्वर्या और अक्षय की जोड़ी साथ काम कर रही है. यह एक रोमांटिक कॉमेडी फिल्म है. इसमें अक्षय कुमार-ऐश्वर्या ऋषि कपूर और नीतू सिंह के दौर की याद दिलाते हैं. अक्षय कुमार अपनी भूमिका में फिट बैठे हैं, कॉमेडी के साथ-साथ भावपूर्ण भूमिकाओं या रोमांटिक दृश्यों वाली उनकी कई फिल्में हिट रही हैं. 40 के पड़ाव पर पहुंचती ऐश्वर्या नई अभिनेत्रियों पर भारी पड़ रही हैं. वह आजकल विविध भूमिकाओं वाली फिल्में कर रही हैं. फिल्म के डायरेक्टर-प्रोड्यूसर विपुल शाह हैं. लेखक सुरेश नायर एवं अतिश कपाड़िया बहावल है. संगीत दिया है प्रीतम चक्रवर्ती ने और कॉस्ट्यूम डिज़ाइनर हैं सबीना ख़ान. मुख्य कलाकार हैं अक्षय कुमार, ऐश्वर्या राय एवं नेहा धूपिया और सहायक कलाकार हैं रणधीर कपूर, किरण खेर, राजपाल यादव एवं ओम पुरी. यह फिल्म 1970 के इर्द-गिर्द घूमती है. इसमें अक्षय कुमार और ऐश्वर्या पति-पत्नी की भूमिका में हैं. किशन (अक्षय कुमार) और माला (ऐश्वर्या) की शादी को 35 साल गुज़र चुके हैं. उनका एक बेटा बंटी (आदित्य कपूर) है, जो अपने मां-बाप के झगड़ों को देख-देखकर बड़ा होता है. वह सोचता है कि क्या कभी उनके बीच प्यार हो सकता है. बंटी की गर्लफ्रेंड तान्या (सुदीपा शाह) है. उसके दादा बंटी को टाइम मशीन से पीछे ले जाते हैं और पूछते हैं कि अगर अतीत की कोई ग़लती सुधारने का मौक़ा मिले तो तुम कौन सी ग़लती सुधारना पसंद करोगे? बंटी कहता है कि अपने मां-बाप की शादी. बंटी देखता है कि उसके मां-बाप तब भी हमेशा लड़ते-झगड़ते रहते थे. फिर भी दोनों एक-दूसरे को प्यार करते थे और उन्होंने शादी भी की. दोनों की यह लव मैरिज थी, बावजूद इसके दोनों ख़ुश नहीं हैं. यह फिल्म आगामी 5 नवंबर को रिलीज़ होगी.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

चौथी दुनिया

बिहार झारखंड

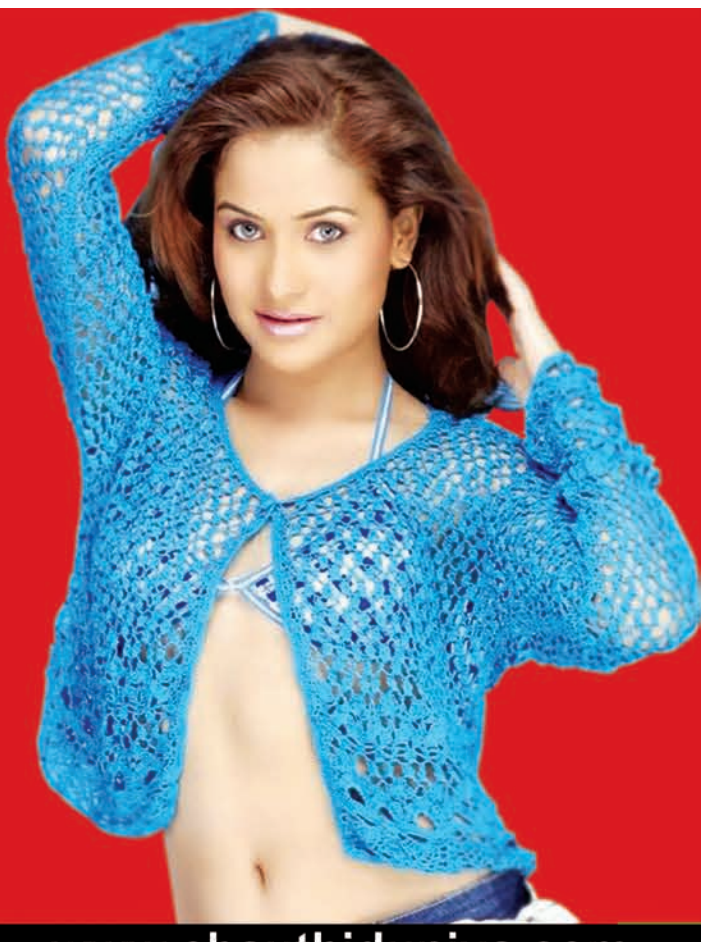

दिल्ली, 25 अक्टूबर-31 अक्टूबर 2010

www.chauthiduniya.com

हम तो डूबेंगे ही, तुम्हें भी ले डूबेंगे

अजब तस्वीर है हर तरफ़. प्रत्येक राजनीतिक दल के सामने एक साथ दो मोर्चे हैं. एक ओर परंपरागत प्रतिद्वंद्वी हैं तो दूसरी ओर घर के असंतुष्ट. बाग़ियों के तेवर और कार्यकर्ताओं की नाराज़गी ने हर दल के हाईकमान को कुछ ज़्यादा ही मुश्किल में डाल रखा है. अपनी प्रतिष्ठा दांव पर लगी देख वरिष्ठ नेताओं की आंखों से नींद ग़ायब है. मनाने-समझाने का दौर जारी है, लेकिन बात है कि दूर तक बनती नज़र नहीं आती.

सरोज सिंह

पूरा बिहार चुनावी मूड में है. हर तरफ़ हार-जीत के आंकड़े और समीकरण समझाए जा रहे हैं. सुबह जो प्रत्याशी भारी दिखता है, शाम होते-होते वह कमज़ोर साबित कर दिया जाता है. समर्थकों की एक बड़ी फ़ौज नेता जी के गांव में आते ही ज़िंदाबाद के नारों से कान फाड़ रही है, लेकिन नेता जी के जाते ही गुटखा मुंह में जाता है और थूक फेंकने के साथ एक्सपर्ट टिप्पणी आती है, इस बार दिक्कत है हो. ज़मीन से जुड़े समर्थकों का यह अनुमान यूं ही नहीं है. दरअसल चुनावी मूड में बाग़ियों के चढ़े रंग ने लगभग सभी दलों के नेताओं एवं समर्थकों की नींद ख़राब कर दी है. यह ऐसा संकट है, जिसे दूर करने के सारे प्रयास बेकार चले गए. हाल यह है कि बिहार विधानसभा की 243 सीटों में से लगभग साठ सीटों पर बाग़ी प्रत्याशी अपने दल के उम्मीदवारों की संभावनाओं पर पानी फेर रहे हैं. टिकट न मिलने से कुछ नेता ऐसे हताश हुए कि उन्होंने ठान लिया है कि हम तो डूबेंगे सनम, तुम्हें भी ले डूबेंगे.

नेताओं के बीच आपसी खींचतान और अपने रिश्तेदारों के लिए हद से गुज़र जाने की कवायद ने ज़मीन से जुड़े कई योग्य प्रत्याशियों को टिकट से वंचित कर दिया. इसके अलावा इस बार चुनाव लड़ने वालों की संख्या और महत्वाकांक्षा भी ज़्यादा थी. यही वजह रही कि सबसे अलग दिखने का दावा करने वाली भाजपा भी इस बार भारी अनुशासनहीनता का शिकार हो गई. अपने प्रत्याशियों के नाम की घोषणा करने में उसे महीनों का वक़्त लग गया, पर जब नाम धीरे-धीरे सामने आए तो पार्टी में भूचाल आ गया. इसकी परकाष्ठा प्रदेश अध्यक्ष सी पी ठाकुर के इस्तीफ़े के रूप में सामने आई. हालांकि एक हाई वोल्टेज ड्रामे के बाद उन्होंने इस्तीफ़ा वापस ले लिया, लेकिन उन्होंने टिकट बंटवारे में अपनी बेबसी की जो कहानी सुनाई, उसे सुनकर सभी भौचक्के रह गए. ठाकुर ने कहा कि कुछ टिकट ऐसे बांटे गए, जिनकी जानकारी मुझे नहीं थी. कोर कमेटी की बैठक भी कई बार मेरी जानकारी के बग़ैर हो गई.

हरेंद्र प्रताप संकल्प प्रो. रणवीर नंदन रामजन्म शर्मा

अगर कोई पार्टी अध्यक्ष इस तरह की बात कहता है तो उसकी बेबसी और पार्टी में आंतरिक लोकतंत्र का अंदाज़ा सहज ही लगाया जा सकता है. स्वाभाविक है, जब आंतरिक लोकतंत्र का गला घोंटा गया हो तो टिकट बंटवारे के मापदंड अलग हो गए होंगे. यही वजह है कि बाग़ियों की एक बड़ी फ़ौज भाजपा प्रत्याशियों के लिए मुसीबत बनकर खड़ी है. संजीव झा सहरसा से, जनार्दन यादव नरपतगंज से, दिलीप वर्मा सिकटा से, मालती गुप्ता रामगढ़ से, सत्यदेव सिंह गोरियाकोठी से, शंभू प्रसाद सीवान से और विजय सिंह दरौंदा से भाजपा प्रत्याशियों का रास्ता रोककर खड़े हैं. ये ऐसे लोग हैं, जिन्हें टिकट मिलने की प्रबल संभावना थी, पर भाजपा के अंदर की गुटबाज़ी ने इन नेताओं को टिकट से वंचित कर दिया. इसी तरह ठाकुरगंज के पूर्व विधायक अवध बिहारी सिंह, अररिया के पूर्व प्रत्याशी अजय झा एवं बनमनखी से व्यासदेव पासवान भी बग़ावत का झंडा उठाए हुए हैं. ये तो नेताओं के स्तर पर विद्रोह की बात है. पटना में भी हरेंद्र एवं रणवीर नंदन ने बाग़ी बनकर चुनाव लड़ने का फ़ैसला कर लिया है. कार्यकर्ताओं के स्तर पर स्थिति और भी भयावह है. किशनगंज एवं पूर्णिया में जद-यू के सामने आत्मसमर्पण ने भाजपा कार्यकर्ताओं की भावनाओं को गहरी ठेस पहुंचाई. बहादुरगंज सीट जद-यू को देने से वरुण सिंह और उनके समर्थक काफ़ी नाराज़ हैं. इसके अलावा नरेंद्र मोदी को चुनाव प्रचार से अलग रखने के फ़ैसले से पूरे बिहार में भाजपा कार्यकर्ताओं का मनोबल गिरा है. उन्हें लगता है कि पार्टी जद-यू की पिछलग्गू बनती जा रही है, जिससे जनता के बीच जाकर अपनी बात रखने में दिक्कत आ रही है.

बाग़ी बनकर रामगढ़ से चुनाव लड़ रहीं मालती गुप्ता कहती हैं कि जगदानंद सिंह हमेशा एनडीए के ख़िलाफ़ बोलते हैं और जब चुनाव का समय आया तो किसी स्थानीय कार्यकर्ता को टिकट न देकर उनके बेटे को टिकट दे दिया गया. जद-यू तो अपने बड़े नेताओं से ही ज़्यादा संकट में है. सांसद मोनाज़िर हसन की पत्नी राजद के टिकट पर मुंगेर से लड़ रही हैं. पूर्णमासी राम ने तो जैसे चंपारण में एनडीए को हराने की क़सम खा ली है. पत्नी को टिकट न मिलने से सांसद अर्जुन राय भी नाराज़ बताए जाते हैं. ललन सिंह ने तो खुलेआम ऐलान-ए-जंग कर रखा है. उपेंद्र कुशवाहा की नाराज़गी भी जद-यू को भारी पड़ रही है. अपनी बिरादरी में उपेंद्र का प्रभाव जद-यू प्रत्याशियों को संकट में डाल सकता है. उधर विजय कृष्ण जद-यू छोड़कर राजद में चले गए और बाढ़ से चुनाव लड़ रहे हैं. उनके मैदान में आ जाने से वहां नीतीश कुमार के ख़ास ज्ञानू संकट में फंस गए हैं. इसके अलावा टिकट को लेकर समर्थकों की नाराज़गी अपनी जगह बनी हुई है. राजद-लोजपा को भी बाग़ियों के वायरस ने परेशान कर रखा है. लोजपा में कुछ टिकट ऐसे लोगों को दे दिए गए, जिनका चुनाव हारने का रिकॉर्ड रहा है. इसके अलावा कुछ टिकट ऐसे लोगों को मिले, जिनकी क्षेत्र में पकड़ काफ़ी ढीली है. रामविलास पासवान के दामाद मृणाल का राजगीर में भारी विरोध हो रहा है. चकाई से लोजपा प्रत्याशी विजय सिंह लगातार चुनाव हारते रहे हैं. लोजपा अल्पसंख्यक प्रकोष्ठ और अति पिछड़ा प्रकोष्ठ के कई नेता पार्टी छोड़कर बाग़ी तेवर अपनाए हुए हैं. पार्टी के दो विधायक अच्युतानंद सिंह एवं मंजर आलम दूसरे दल से चुनाव लड़कर लोजपा को संकट में डाले हुए हैं. राजद सांसद उमाशंकर सिंह ने तो खुलेआम ऐलान कर दिया है कि वह पार्टी प्रत्याशियों को घूम-घूमकर हराएंगे. रघुवंश सिंह के भाई रघुपति ने भी कांग्रेस का हाथ पकड़ लिया है. कांग्रेस में भी बाग़ियों की भरमार है. सदाकत आश्रम में तो रोज़ एक्शन फिल्म का सीन दिख जाता है. कांग्रेस के बड़े नेता मान चुके हैं कि टिकट बंटवारे में कुछ ख़ामियां रह गईं, इस कारण कार्यकर्ताओं में गुस्सा है. चंपारण में कार्यकर्ताओं का गुस्सा पार्टी के लिए भारी पड़ सकता है. सारण में भी देवकुमार सिंह एवं धर्मनाथ राय जैसे नेताओं की अनदेखी कर दी गई. बताया जा रहा है कि सांसद उमाशंकर सिंह एवं ओमप्रकाश यादव के कारण कुछ दमदार नेता टिकट से वंचित रह गए, जिसका ख़ामियाज़ा पार्टी को उठाना पड़ सकता है. देखा जाए तो दर दल में आग लगी हुई है. इस कारण चुनौती दोहरी हो गई है. एक ओर विरोधी दलों से निपटना है, दूसरी ओर दल के बाग़ियों एवं नाराज कार्यकर्ताओं को भी समझाना है. सभी जानते हैं कि इस बार लड़ाई आर-पार की है. जीत का अंतर भी काफ़ी कम रहने वाला है. इसलिए कुछ वोटों का नुक़सान भी सारा खेल बिगाड़ सकता है. बाग़ी एवं भड़के कार्यकर्ता अगर नहीं माने तो विधानसभा जाने और सरकार बनाने का सपना धरा रह जाएगा. इसलिए कोशिश है कि पहले बाग़ियों को मनाया और कार्यकर्ताओं को समझाया जाए. जिस सीट पर जितना जल्दी यह काम होगा, वहां दलीय प्रत्याशी को उतनी ही आसानी होगी. वरना, जैसा बाग़ी कह रहे हैं कि हम तो डूबेंगे सनम, तुम्हें भी ले डूबेंगे वाली बात सच हो जाएगी.

feedback@chauthiduniya.com

सारण ज़िले के दस विधानसभा क्षेत्रों में कुल मतदाताओं की संख्या 21 लाख 37 हज़ार 5 सौ 97 है, जो आगामी 28 अक्टूबर को इन प्रत्याशियों के भाग्य का फ़ैसला करने के लिए अपने मताधिकार का प्रयोग करेंगे.

कारोबार से जुड़े लोग राज्य में राजनीतिक स्थिरता के पक्षधर हैं. वे चाहते हैं कि जो भी सरकार बने, वह पूरे पांच साल तक चले.

चुनावी तड़का

मधेपुरा का असली नेता कौन?

बात फैली कि नीतीश कुमार इस बार मधेपुरा में कैंप करके चुनाव प्रचार करेंगे. इसके बाद तो तराज़ू पर एक तरफ़ नीतीश और एक तरफ़ शरद यादव को तौलने का सिलसिला शुरू हो गया. टिकट बंटवारे से पहले से ही आहत शरद यादव के समर्थकों का कहना था कि अब एक मधेपुरा ही तो बचा था शरद जी के लिए, वहां भी अगर माननीय कैंप करेंगे तो क्या मैसेज जाएगा. कम से कम मधेपुरा में तो दखलंदाज़ी नहीं होनी चाहिए थी. शरद यादव के एक चहेते ने कहा कि चिंता मत कीजिए, चुनाव परिणाम बता देगा कि मधेपुरा का असली नेता कौन है.

प्रभुनाथ, क्या हुआ तेरा वादा

बांका में इन दिनों प्रभुनाथ सिंह के वादे को लेकर बड़ी चर्चा है. किसी राजनीतिक चौपाल में बैठ जाइए, प्रभुनाथ सिंह के वादों पर बहस छिड़ी मिलेगी. पुतुल सिंह के ख़िलाफ़ उम्मीदवार न उतारने की हुंकार भरने वाले प्रभुनाथ सिंह भी चुप हैं. जवाब क्या दें, समझ में नहीं आ रहा है. जयप्रकाश यादव की जिद के आगे प्रभुनाथ सिंह का वादा नहीं टिक पाया. जद–यू वाले तो बस इसी इंतज़ार में थे. गली–गली गुनगुनाते चल रहे हैं, क्या हुआ प्रभुनाथ तेरा वादा, वह कसम वह इरादा.

मौसम चुनाव का, भाषण मानवशास्त्र पर

शिवानंद तिवारी का भी अपना अलग मिजाज़ है. जो ठान लेते हैं, वही बोलते हैं. भले ही मौक़ा कोई भी हो. पार्टी कार्यालय में नंग–धड़ंग विरोध प्रदर्शन पर वह इतना आहत हुए कि पत्रकारों से चुनाव के बजाय मानवशास्त्र पर बात करने लगे. कहने लगे, पहले मानव के बदन पर कपड़े नहीं होते थे, लेकिन जैसे–जैसे सभ्यता का विकास हुआ, बदन पर कपड़े बढ़ने लगे. यहां तो उलटा हो रहा है, लोग चांद पर जा रहे हैं और कुछ लोग कपड़े उतार कर प्रदर्शन कर रहे हैं. यह तो मानव सभ्यता के विकास की कहानी में नया पेंच है. पत्रकारों को भी लगा कि अब यहां से चले जाना ही ठीक रहेगा.

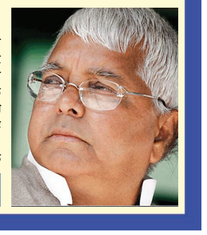

रघुवंश सिंह को पहनाएंगे चूड़ी

लालू प्रसाद के हनुमान छोटू सिंह इन दिनों काफ़ी गुस्से में हैं. नाराज़गी की बहुत सारी वजहें थीं, पर बांका से जयप्रकाश यादव की उम्मीदवारी पर उनका गुस्सा फूट पड़ा. छोटू सिंह कहते हैं कि पुतुल सिंह के ख़िलाफ़ प्रत्याशी उतारना आत्मघाती क़दम है. रघुवंश सिंह ने इस मामले में कुछ नहीं किया. इसलिए वह उन्हें चूड़ी पहना कर अपने गुस्से का इज़हार करेंगे. आगे की रणनीति के बारे में छोटू सिंह कहते हैं कि जल्द ही चौंकाने वाली ख़बर मिलेगी.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

समस्तीपुर: आर–पार की लड़ाई में फंसे महारथी

रामचंद्र | रामनाथ ठाकुर | नागमणि | डॉ अशोक | महेश्वरी हजारी | विजय कुमार चौधरी

समस्तीपुर के 10 विधानसभा क्षेत्रों में होने वाले मतदान के लिए सत्तारूढ़ जदयू–भाजपा गठबंधन जहां प्रमुख विपक्षी राजद–लोजपा गठबंधन से आर–पार की लड़ाई के मूड में आ गया है, वहीं कांग्रेस भी लालू–रामविलास से अलग होकर इस बार सभी सीटों पर अपने प्रत्याशी उतार कर चुनावी संग्राम को त्रिकोणीय बनाने के लिए प्रयासरत है. सीपीआई, सीपीएम एवं भाकपा (माले) ने भी आपसी तालमेल के आधार पर प्रत्याशी उतारे हैं. इस बार मुलायम सिंह यादव, मायावती एवं देवगौड़ा आदि नेताओं की पार्टियां भी ज़िले में अपने प्रत्याशी उतार कर अपना वजूद दिखा रही हैं. सत्ता में दोबारा वापसी के संकल्प के साथ जद–यू ने ज़िले की दस में से दो सीटें सहयोगी भाजपा को दी हैं. इसी तरह राजद ने भी अपनी सहयोगी लोजपा को दो सीटों पर ही मना लिया है. हर दल के बाग़ी बतौर निर्दलीय प्रत्याशी किस्मत आज़मा रहे हैं. कल तक जो नेता अपने पार्टी प्रमुख की जय–जयकार में लगे थे, आज चुनावी मैदान में स्पीड ब्रेकर का काम कर रहे हैं.

जद–यू ने जहां सरायरंजन क्षेत्र से फिर एक बार प्रदेश अध्यक्ष विजय कुमार चौधरी को तीर थमाया है, वहीं राजद ने भी अपने पूर्व सांसद एवं प्रदेश अध्यक्ष पीतांबर पासवान को रोसड़ा (सु.) क्षेत्र से लालटेन थमा दी है. ज़िले का चुनावी माहौल पूर्व सांसद रामसेवक हजारी के कल्याणपुर (सु.) सीट से खड़े हो जाने के बाद उफान पर आ गया है. कांग्रेस ने भी पूर्व केंद्रीय मंत्री नागमणि को नवगठित मोरबा क्षेत्र में पंजा थमाकर हलचल मचा दी है. राजद विधायक गजेंद्र प्रसाद सिंह वारिसनगर में, सुनील कुमार पुष्पम हसनपुर में और अजय कुमार मोहिउद्दीनगर में लालटेन फिर से जलाने को बेताब दिखते हैं. लोजपा विधायक कल्याणपुर (सु.) और रमेश कुमार राय विभूतिपुर क्षेत्र में बंगला सजा रहे हैं. भाजपा ने इस बार रोसड़ा (सु.) क्षेत्र से मंजू हजारी और मोहिउद्दीनगर क्षेत्र से राणा गंगेश्वर सिंह को उम्मीदवार बनाया है. ज़िले में नीतीश सरकार का परचम लहरा रहे एकमात्र जद–यू विधायक रामनाथ ठाकुर चौथी बार जीत के उद्देश्य से खड़े हुए हैं. उनका मुक़ाबला कांग्रेस के पूर्व विधान पार्षद हरिनारायण चौधरी के पुत्र डॉ. तरुण कुमार और राजद के प्रदेश महासचिव अख्तरुल इस्लाम साहिन से है. जद–यू ने भी विभूतिपुर में रामबालक सिंह को सीपीएम विधायक रामदेव वर्मा के ख़िलाफ़ उतारा है. उजियारपुर में जद–यू ने राजद से आए मौजूदा विधायक रामलखन महतो को ही तीर थमा दिया है, जिनका मुक़ाबला दुर्गा प्रसाद सिंह और कांग्रेस के प्रशांत सागर के बीच है.

रोसड़ा के सामान्य से सुरक्षित क्षेत्र हो जाने से ज़िला जद–यू अध्यक्ष एवं पूर्व विधायक अशोक कुमार मुन्ना निकटवर्ती वारिसनगर क्षेत्र में तीर लेकर मैदान में हैं. राजद के दिग्गज नेता एवं पूर्व मंत्री गजेंद्र प्रसाद सिंह भी वारिसनगर क्षेत्र में ही पड़ाव डाले हुए हैं. कांग्रेस ने यहां से विजय कुमार राय को पंजा थमाकर गहमागहमी पैदा कर दी है. सरायरंजन क्षेत्र में राजद ने पूर्व मंत्री रामाश्रय सहनी एवं कांग्रेस ने आभास झा को उतार कर मुक़ाबले को रोचक बना दिया है. हसनपुर में कांग्रेस ने अंतिम समय में आरिफ रजा को उतार कर जद–यू के राजकुमार राय और राजद विधायक सुनील कुमार पुष्पम खेमे में खलबली मचा दी है. इसी तरह रोसड़ा क्षेत्र में राजद के पूर्व सांसद पीतांबर पासवान के मुक़ाबले कांग्रेस ने इंजीनियर सरिता देवी को पंजा थमाया है तो भाजपा ने ज़िला परिषद अध्यक्ष मंजू हजारी को कमल खिलाने की ज़िम्मेदारी सौंपी है. उधर सीपीएम ने अपने विधायक रामदेव वर्मा को विभूतिपुर एवं पार्टी ज़िला सचिव अजय कुमार को उजियारपुर क्षेत्र से उतारा है. मोर्चे के अंतर्गत सीपीआई ने राष्ट्रीय परिषद सदस्य रामचंद्र महतो को वारिसनगर और रामविलास राय विमल को सरायरंजन से उम्मीदवार बनाया है. भाकपा (माले) की महिला नेता प्रमिला राय समस्तीपुर क्षेत्र में वामपंथ का पाठ पढ़ा रही हैं. पुराने योद्धा शत्रुघ्न पासवान समाजवादी पार्टी से कल्याणपुर एवं भाकपा माले नेता जीवछ पासवान वारिसनगर में किस्मत आज़माने उतरे हैं.

ज़िले की चुनावी राजनीति में पूर्व सांसद रामसेवक हजारी के परिवार की पौ बारह है. रोसड़ा से बहू मंजू हजारी और कुशेश्वरस्थान से परिजन शशिभूषण हजारी भाजपा से प्रत्याशी बनाए गए हैं. कल्याणपुर क्षेत्र में कांग्रेस प्रत्याशी अनीता राम और लोजपा विधायक विश्वनाथ पासवान का चुनावी रंग जद–यू प्रत्याशी रामसेवक हजारी के सामने कितना निखर कर सामने आएगा, इसे लेकर गठबंधन प्रमुख माथापच्ची में लगे हैं. इस बार बदलाव की लहर में राजद के पूर्व सांसद पीतांबर पासवान दरभंगा ज़िला छोड़ ज़िले के रोसड़ा क्षेत्र में किस्मत आज़मा रहे हैं तो पूर्व लोजपा सांसद रामचंद्र पासवान अपनी किस्मत आज़माने कुशेश्वरस्थान चले गए. वहीं डॉ. अशोक कुमार का चुनावी क्षेत्र सिंघिया ख़त्म हो गया तो वह भी कुशेश्वरस्थान में ही विधानसभा जाने का रास्ता ढूंढ़ रहे हैं. पिछले संसदीय चुनाव के दो प्रतिद्वंद्वी कांग्रेस के अशोक राम एवं लोजपा के रामचंद्र पासवान एक बार फिर कुशेश्वरस्थान में टकरा रहे हैं. समस्तीपुर (सु.) संसदीय क्षेत्र के पिछले चुनाव के विजेता जद–यू सांसद महेश्वर हजारी के भतीजे शशिभूषण हजारी कुशेश्वरस्थान में बतौर भाजपा प्रत्याशी तीसरा कोण बना रहे हैं.

जैसे–जैसे चुनाव प्रचार में तेज़ी आएगी, निर्दलीय प्रत्याशियों के समर्थक चुनाव परिणाम की झलक मिलते ही दलों की ओर पांव बढ़ाते दिखेंगे. अभी मान–मनौव्वल का दौर चल रहा है. हर क्षेत्र में विकास की चर्चा गर्म है. सड़क, शिक्षा, पेयजल, स्वास्थ्य, बिजली एवं सुरक्षा जैसे मुद्दों पर भी मतदाता टिप्पणी कर रहे हैं. अफसरों का दबदबा बढ़ने की भी चर्चा हो रही है. जैसे–जैसे प्रत्याशियों के पक्ष में प्रचार के लिए स्टार प्रचारक और पार्टी नेता आते जाएंगे, वैसे–वैसे टांग खिंचाई करने वाले किनारे लगते जाएंगे और तभी किसी भी क्षेत्र में कोई स्थिति स्पष्ट हो पाएगी.

विकास कुमार
feedback@chauthiduniya.com

उम्मीदवारों से ज़्यादा आकाओं की लड़ाई

मनोज कुमार राव

एक तरफ़ जहां अधिकतर सभी पार्टियों में प्रत्याशियों को लेकर कार्यकर्ताओं में रोष है, वहीं दूसरी ओर पूर्वी एवं पश्चिमी चंपारण के दबंग नेताओं की प्रतिष्ठा दांव पर लगी हुई है. पूर्व सांसद सीताराम सिंह, सांसद रमा देवी एवं पूर्व सांसद अखिलेश सिंह ने अपने–अपने क्षेत्रों में उम्मीदवार खड़े किए हैं, लेकिन पूरे चंपारण में कोई भी प्रत्याशी फ़िलहाल ऐसा नहीं दिख रहा है, जिसकी जीत को लेकर आश्वस्त हुआ जा सके. सबसे रोचक लड़ाई मधुबन विधानसभा क्षेत्र की है. यहां पर पूर्व सांसद सीताराम सिंह के पुत्र एवं राजद के पूर्व विधायक राणा रणधीर सिंह चुनावी मैदान में ताल ठोक रहे हैं. पूर्व विधायक एवं जद–यू नेता शिव जी राय और केसरिया से राजद के विधायक रह चुके राजेश रोशन उर्फ़ बबलू देव भी कांग्रेस के टिकट पर यहां से अपना भाग्य आज़मा रहे हैं. पेशे से इंजीनियर राणा रणधीर का नाम पिता सीताराम सिंह के साथ जोड़ा जा रहा है तो दूसरी ओर बबलू देव का नाम मोतिहारी के पूर्व सांसद अखिलेख सिंह के साथ जोड़ा जा रहा है. वैसे तो चंपारण की कई सीटों पर अखिलेश सिंह के पसंदीदा उम्मीदवारों की चर्चा है, लेकिन बबलू देव के साथ उनका नाम जुड़ना एकदम सहज माना जा रहा है. सीताराम सिंह के राजनीतिक भविष्य के लिए राणा रणधीर सिंह की जीत अति आवश्यक मानी जा रही है, वहीं बबलू देव की जीत को यहां के मतदाता अखिलेश सिंह की जीत के रूप में देख रहे हैं. 2000 के विधानसभा चुनाव में मधुबन सीट पर राजद प्रत्याशी सीताराम सिंह एवं बबलू देव की भिड़ंत हुई थी, जिसमें 2800 वोटों से सीताराम सिंह जीत गए थे. आज एक बार फिर मधुबन के मैदान में सीताराम सिंह के पुत्र रणधीर सिंह और बबलू देव आमने–सामने हैं. एक तरफ़ राणा रणधीर सिंह, दूसरी ओर बबलू देव और तीसरी ओर शिव जी राय हैं. शिव जी राय एवं बबलू देव अपने–अपने कार्यों की सूची परोस रहे हैं. वहीं रणधीर सिंह ख़ुद को जनता का सच्चा हिमायती और योग्य सिपाही बता रहे हैं. शिवहर की सांसद रमा देवी ने भी अपना मोहरा चंपारण के मैदान में छोड़ दिया है. पवन जायसवाल ने ढाका विधानसभा क्षेत्र से बतौर निर्दलीय उम्मीदवार कमर कस ली है. वैश्य मतदाताओं में उनकी पकड़ अच्छी है. इसके पीछे सांसद रमा देवी का वरदहस्त माना जा रहा है. हालांकि ढाका विधानसभा क्षेत्र में मुसलमान मतदाता निर्णायक भूमिका में हैं, लेकिन वैश्य कार्ड लेकर पवन जायसवाल चुनावी मैदान में उतरे हैं. फ़िलहाल यहां किसी की जीत–हार के बारे में कुछ भी कहना मुश्किल है.

मधुबन

सीताराम सिंह | राणा रणधीर सिंह | अखिलेश सिंह | बबलू देव

feedback@chauthiduniya.com

सारण: चेहरे और हथकंडे दोनों पुराने

संपूर्ण क्रांति के प्रणेता लोकनायक जय प्रकाश नारायण की जन्मस्थली सारण के दस विधानसभा क्षेत्रों में तीसरे चरण में मतदान होगा. यहां सभी दलों ने अपने मोहरे बिछा दिए हैं. नामांकन के बाद प्रत्याशी प्रचार कार्य में ज़ोर–शोर से जुट गए हैं. सभी दस सीटों पर चुनावी जंग की तस्वीर लगभग साफ़ हो चुकी है. कहीं दो के बीच सीधा टकराव है तो कहीं त्रिकोणीय संघर्ष के आसार. बाग़ी बने कई क़द्दावर नेता भी एड़ी–चोटी का ज़ोर लगा रहे हैं. यह इलाक़ा राजद प्रमुख लालू प्रसाद का गढ़ रहा है. उनके सामने अपने संसदीय क्षेत्र में वजूद बचाने का सवाल खड़ा है, वहीं सत्तापक्ष से विक्षुब्ध होकर लालू प्रसाद से दोस्ती का हाथ मिलाने वाले पूर्व सांसद प्रभुनाथ सिंह के समक्ष अपना राजनीतिक वर्चस्व पुनर्स्थापित करने की चुनौती है. राजग के दोनों घटक दलों के सामने इस चुनौती के मुक़ाबले का यक्ष प्रश्न मंडरा रहा है. दूसरी ओर देश की सबसे पुरानी सियासी पार्टी कांग्रेस को अपनी खोई साख बहाल करने की चिंता है.

सारण ज़िले के दस विधानसभा क्षेत्रों में कुल मतदाताओं की संख्या 21 लाख 37 हज़ार 5 सौ 97 है, जो आगामी 28 अक्टूबर को इन प्रत्याशियों के भाग्य का फ़ैसला करने के लिए अपने मताधिकार का प्रयोग करेंगे. आम जनता के पास मुद्दों की कमी नहीं है. गंगा, गंडक एवं घाघरा के कटाव में विस्थापित होने का दर्द, मढ़ौरा की इकलौती चीनी एवं मार्टन फैक्ट्री की बंदी, पानी, बिजली, सड़क और सिंचाई सुविधा का अभाव जैसी अनेक समस्याएं हैं, लेकिन इन मुद्दों को नज़रअंदाज़ करके जातीय समीकरणों के सहारे मतदाताओं की कमज़ोर नस दबाने के प्रयास जारी हैं. यहां के सभी दस विधानसभा क्षेत्रों का भूगोल भले ही बदल गया है, मगर इतिहास दोहराने की तैयारी है. उम्मीदवारों के चेहरे अधिकतर पुराने हैं, लेकिन स्वर और झंडे ज़रूर बदल गए हैं, हथकंडे भी वही पुराने हैं. प्रेक्षकों की मानें तो इस बार स्थिति पिछले विधानसभा चुनावों से काफी भिन्न है. पहले यहां आर–पार की लड़ाई होती थी, लेकिन इस बार ऐसा नहीं है. सभी दलीय और निर्दलीय प्रत्याशी मतदाताओं से संपर्क करने में लगे हैं. पुराने संबंधों को ताज़ा करने का प्रयास किया जा रहा है. पूर्व के आंकड़ों के आधार पर कार्यकर्ताओं को निर्देश दिए जाते हैं. उधर जागरूक मतदाता किंकर्तव्यविमूढ़ हैं. मज़बूरी यह है कि चाहे–अनचाहे किसी एक को चुनना है. आसन्न विधानसभा चुनाव में एक ओर निवर्तमान विधायक अपनी जीत दोहराने को बेताब हैं तो दूसरी ओर उन्हें पछाड़ने के लिए अन्य प्रत्याशी एड़ी–चोटी का जोर लगा रहे हैं. एकमा सीट का निर्धारण नए परिसीमन में हुआ है, जहां मुक़ाबला जद–यू के मनोरंजन सिंह धूमल, राजद के कामेश्वर कुमार सिंह मुन्ना एवं कांग्रेस के डॉ. एस कुमार के बीच है. वहीं राजद के टिकट से वंचित हुए पूर्व केंद्रीय मंत्री राम बहादुर सिंह के पुत्र इंजीनियर संजय सिंह के बाग़ी उम्मीदवार बन जाने से चुनावी परिदृश्य रोचक बन गया है. महाराजगंज के राजद सांसद उमाशंकर सिंह कांग्रेस प्रत्याशी डॉ. एस कुमार के सारथी बनकर खड़े हैं. मांझी विधानसभा क्षेत्र के निवर्तमान विधायक गौतम सिंह इस बार अपनी हैट्रिक पूरी करने के प्रयास में हैं. पूर्व सांसद प्रभुनाथ सिंह के संबंधी गौतम सिंह के सामने राजद के हेम नारायण सिंह एवं कांग्रेस के पूर्व विधायक बुद्धन प्रसाद यादव के साथ कई अन्य प्रत्याशी ज़ोर आज़माइश कर रहे हैं. बनियापुर विधानसभा क्षेत्र में प्रभुनाथ सिंह के अनुज केदारनाथ सिंह, जद–यू के वीरेंद्र ओझा एवं कांग्रेस के शैलेश कुमार सिंह के बीच कड़ा मुक़ाबला तय है. निर्दलीय उम्मीदवार के रूप में इंजीनियर सच्चिदानंद राय मैदान में उतरे हैं. तरैया विधानसभा क्षेत्र से राजद के रामदास राय ने पिछले चुनाव में भाजपा के जनक सिंह को हराया था. यहां राजद के रामप्रवेश राय के सामने कांग्रेस ने तारकेश्वर सिंह एवं भाजपा ने जनक सिंह को बतौर विकल्प आज़माया है. छपरा विधानसभा सीट पर 2005 में जद–यू के राम प्रवेश राय ने राजद के उदित राय को हराया था. इस बार यहां मुक़ाबला राजद के डॉ. प्रमेंद्र रंजन, भाजपा के जनार्दन सिंह सिग्रीवाल और कांग्रेस के अनिल कुमार सिंह के बीच होना तय है. गरखा विधानसभा सीट पर ज्ञानचंद्र मांझी ने पिछली बार कांग्रेस के रघुनंदन मांझी को हराया था. इस बार यहां भाजपा एवं कांग्रेस ने अपना–अपना प्रत्याशी दोहराया है. जबकि राजद ने भुनेश्वर चौधरी पर अपना दांव लगाया है. ज़िले के पूर्वी छोर के मुहाने पर स्थित बाबा हरिहरनाथ की नगरी सोनपुर में राजद ने अपने निवर्तमान विधायक रामानुज प्रसाद को छुट्टी देकर पूर्व मुख्यमंत्री राबड़ी देवी को मैदान में उतारा है. यहां उनका मुक़ाबला भाजपा नेता विनय कुमार सिंह के साथ है. विनय पूर्व सांसद प्रभुनाथ सिंह के समधी हैं. यहां कांग्रेस से अजय सिंह मैदान में हैं. अमनौर सीट नए परिसीमन के तहत अस्तित्व में आई है. यहां लोजपा प्रत्याशी के तौर पर शैलेंद्र प्रताप सिंह के सामने जद–यू के कृष्णा कुमार उर्फ़ मंटू सिंह एवं कांग्रेस के विधानचंद्र राय मैदान में हैं.

परसा राजद की परंपरागत सीट है. पिछले चुनाव में चंद्रिका राय को जद–यू के छोटेलाल राय ने शिकस्त देकर यह सीट राजग के पाले में डाली थी. इस बार दोनों फिर सामने हैं, जबकि कांग्रेस ने रामनाथ विद्यार्थी को मौक़ा देकर अपनी साख बचाने की ज़िम्मेदारी सौंपी है. उमाशंकर सिंह ने पार्टी लीक से हटकर एकमा एवं बनियापुर के कांग्रेस प्रत्याशियों को व्यक्तिगत रूप से सहयोग करने का ऐलान करके राजद के उम्मीदवारों को सकते में डाल दिया है. उधर पुतुल सिंह के ख़िलाफ़ राजद उम्मीवार खड़ा किए जाने की घोषणा को वादाख़िलाफ़ी बताते हुए उन्होंने इसका अंजाम भुगतने के लिए तैयार रहने को कहा है. उनके बग़ावती तेवर से राजग प्रत्याशियों को राहत मिलने की संभावना बढ़ गई है.

रघुनंदन मांझी | रवींद्र मिश्रा | गौतम सिंह | डॉ एस कुमार | संजय सिंह | सिग्रीवाल | एस एन राय

विजयेंद्र कुमार
feedback@chauthiduniya.com

साहेबगंज जिले के वासियों से स्वास्थ्य विभाग की अपील

दुर्गा पूजा के अवसर पर दिल्ली एवं अन्य अक्रांत जगहों से जिला में लोगों के घर वापस आने की संभावना है, यह भी संभावना है कि वे लोग पूर्व से ही डेंगू के विषाणु से ग्रसित हों, परन्तु उस रोग का लक्षण अभी प्रकट नहीं हुआ है। जिलेवासियों से मेरा अनुरोध है, आपलोग घबरायें नहीं। इस रोग की जानकारी के लिए यह अपील जारी की जा रही है।

- यह विषाणु जनित रोग है जो मच्छरों के द्वारा फैलती है।
- इसमें तेज बुखार के साथ–साथ उल्टी, शरीर एवं जोड़ों में असहनीय दर्द होता है।
- कभी–कभी शरीर में लाल चकता भी निकल आता है।
- गंभीर स्थिति में नाक, मुंह से खून भी निकलने लगता है और पेट में दर्द तथा मल का रंग काला हो जाता है।
- अन्य विषाणु जनित रोगों की तरह यह भी ठीक हो जाने वाली बीमारी है अगर समय और ढंग से ईलाज कराया जाय।
- इस बीमारी से बचाव का सही तरीका है, मच्छरों से बचें।
- मच्छरदानी का प्रयोग करें, घर के अगल–बगल साफ–सफाई रखें और पानी जमाव न होने दें।
- टूटे–फूटे बर्तन, टायर, कूलर के पानी में भी मच्छर पनपते हैं। इसका भी ध्यान रखें।

मच्छर से बचें डेंगू से बचें

असैनिक शल्य चिकित्सक सह मुख्य चिकित्सा पदाधिकारी, साहेबगंज

वादा करने से बेहतर है काम करके दिखाना

(132) वारिसनगर विधानसभा क्षेत्र से कर्मठ एवं कर्तव्यनिष्ठ निर्दलीय प्रत्याशी

बी.के. सिंह

को बल्ला छाप

पर बटन दबाकर भारी मतों से विजयी बनायें

निवेदक–चुनाव अभियान समिति वारिसनगर विधानसभा क्षेत्र

बढ़ेगा कारोबार, बढ़ेगा बिहार

कहा जाता है कि बेहतर राजनीतिक माहौल में ही आर्थिक उन्नति के अंकुर छिपे होते हैं. चुनावी सरगर्मी शुरू होते ही निज़ाम बदलने की संभावना ने कारोबारी जगत में हलचल पैदा कर दी है. आने वाला समय कैसा होगा, क्या कारोबारी जगत मौजूदा निज़ाम से ख़ुश है, अगर है तो क्यों, क्या सभी वर्ग संतुष्ट हैं, कौन सी उम्मीदें पूरी नहीं हो सकीं और अब नई सरकार से क्या अपेक्षाएं हैं आदि विचार बिंदुओं पर हमने व्यापारी समाज का मन टटोलने की कोशिश की. हमने पाया कि कारोबार से जुड़े लोग, चाहे वे किसी भी स्तर पर हों, राज्य में राजनीतिक स्थिरता के पक्षधर हैं. वे चाहते हैं कि जो भी सरकार बने, वह पूरे पांच साल तक चले.

बिहार राज्य खाद्यान्न व्यवसायी संघ के महामंत्री बलराम प्रसाद का कहना है कि वर्तमान राजग सरकार व्यापारियों एवं उद्यमियों सहित आमजनों के हित में पिछली सरकार की तुलना में बेहतर कार्य कर रही है. विसंगतियां दूर करने हेतु वैट व्यापारी पंचायत का आयोजन, कर दरों को युक्तिसंगत बनाना, मासिक रिटर्न प्रथा को पुनः त्रैमासिक करना, भामाशाह सम्मान और साप्ताहिक बंदी की बाध्यता से मुक्ति जैसे राज्य सरकार के प्रयासों को सराहनीय बताते हुए बलराम प्रसाद आने वाली सरकार से व्यवसायिक समस्याओं के निदान हेतु सहयोग की अपेक्षा रखते हैं. वह कहते हैं कि हमें सरकार से लाइसेंस एवं व्यापार अनुज्ञप्ति नवीकरण में सुधार और नगरपालिका होल्डिंग टैक्स में कमी की भी अपेक्षा है. बिहार प्रादेशिक मारवाड़ी सम्मेलन के अध्यक्ष कमल नोपानी ने कहा कि पिछले पांच वर्षों में राजग सरकार ने व्यापारियों के हित में अनेक कदम उठाए हैं. वह कहते हैं कि व्यापारिक गतिविधियों को बढ़ावा देने हेतु क़ानून व्यवस्था में सुधार और सड़क निर्माण पर जोर दिया गया, लेकिन विदेशी निवेश की दिशा में पर्याप्त प्रयास नहीं हो सके. नाला रोड व्यवसायिक कल्याण समिति के अध्यक्ष संत कुमार उर्फ पप्पू जी भी वर्तमान सरकार की व्यवसायिक– औद्योगिक नीतियों से संतुष्ट हैं. उनका मानना है कि वर्तमान राजग सरकार में सभी वर्ग के व्यवसायियों के हितों का पूरा–पूरा ध्यान रखा गया, अपहरण–रंगदारी जैसे अपराधों पर अंकुश लगा, जिससे व्यापारियों में नया जोश पैदा हुआ. आने वाली सरकार से अपेक्षा यह है कि बिक्रीकर में छूट मिले, कर नियमों का सरलीकरण हो. कर नियमों की चर्चा करते हुए पप्पू जी ने बताया कि 5000 रुपये टैक्स देने के लिए 50,000 रुपये खर्च करने पड़ते हैं.

बिहार उद्योग बचाओ मोर्चा के समन्वयक बलराज कपूर का मानना है कि कानून व्यवस्था में सुधार से उद्यमियों के मनोबल में वृद्धि हुई है, लेकिन चीनी मिल के पुनरुद्धार के लिए सरकार के प्रयास अपर्याप्त रहे. लघु–कुटीर उद्योगों के विकास के लिए भी कोई प्रयास नहीं किया गया. बिहार वैश्य सभा के पूर्व संयुक्त मंत्री अतृप्त जवाहर वर्तमान सरकार की नीतियों से संतुष्ट हैं. उनका मानना है कि कर नियमों का सरलीकरण, विभिन्न यंत्रों की खरीद में और अधिक सब्सिडी दिए जाने की जरूरत है. बिहार तैलिक साहू सभा के रघुनाथ शाह का मानना है कि सरकार ने विकास पर जोर दिया है, परंतु ऊर्जा जैसे महत्वपूर्ण मुद्दों की अनदेखी की है. पटना दुग्ध व्यवसायिक संघ के अध्यक्ष सिताव राय ने सरकार की मद्य एवं उत्पाद नीति की आलोचना करते हुए कहा कि भ्रष्टाचार में वृद्धि हुई है. दुग्ध व्यवसायियों के हितों की अनदेखी की गई. वह कहते हैं कि आने वाली सरकार से अपेक्षा यह है कि हमारे लिए कोल्ड स्टोरेज और रेल में स्पेशल डिब्बे की व्यवस्था की जाए.

क़ानून व्यवस्था में सुधार से उद्यमियों के मनोबल में वृद्धि हुई है, लेकिन चीनी मिल के पुनरुद्धार के लिए सरकार के प्रयास अपर्याप्त रहे. लघु–कुटीर उद्योगों के विकास के लिए भी कोई प्रयास नहीं किया गया. बिहार वैश्य सभा के पूर्व संयुक्त मंत्री अतृप्त जवाहर वर्तमान सरकार की नीतियों से संतुष्ट हैं.

अतृप्त जवाहर | संत कुमार | बलराज कपूर | कमल नेपाली | राघवनाथ साह

धर्मेंद्र कुमार
feedback@chauthiduniya.com

जीवन वृत्त

धर्मेन्द्र कुमार (B.Tech)

पिता– श्री चन्द्रशेखर प्र. यादव, आवास बोर्ड, खगड़िया

राज़नीतिक गुरू– बड़े भाई डा. विवेकानन्द

एसोसियेट प्रो० कटिहार मेडिकल, कॉलेज

सामाजिक गतिविधि

- बाढ़ के स्थायी निदान के लिए आन्दोलन 2004.
- 2004 के खगड़िया के बाढ़ में 2 महीने तक सरकार की सहमति से सदर अस्पताल में जेनरेटर चलाया तथा डाइरिया का दवा दिया।
- 2004 एवं 2007 के बाढ़ के दौरान सभी पंचायत में डाइरिया का कैम्प लगाया। खगड़िया विधान सभा में एक भी आदमी को डाइरिया से मरने नहीं दिया।
- 2005 में फरवरी एवं नवम्बर में विधानसभा चुनाव लड़ा 800 एवं 12000 मत प्राप्त किया।
- 2006 में 21 तकनिकी शिक्षण संस्थानसमूह का शिलान्यास प्रसिद्ध) उद्योगपति एवं समाज सेविका श्रीमती अमला रूइयॉ से कराया।
- 2009 के मार्च में सरकार द्वारा श्यामलाल चन्द्रशेखर नर्सिंग स्कूल को मान्यता दिलाया।
- 2009 के सितम्बर में 180 सीट का श्याम लाल चन्द्रशेखर पारा मेडिकल संस्थान को सरकार द्वारा मान्यता दिलाया।
- 2007 में शहीद प्रभुनारायण मल्टी स्पेशियेलिटी हॉस्पीटल का उद्घाटन श्री रामबहादुर आजाद से कराया। जहाँ सस्ते दर पर ईलाज होता है।
- 2500 मोतियाबिन्द का ऑपरेशन पिछले साल मुफ्त कराया।
- हमारा नारा– रोड, बिजली के साथ शिक्षा एवं रोजगार

महर्षि मेहीं कॉलेज ऑफ पॉलिटेकनिक एण्ड पारा मेडिकल

हॉस्पीटल रोड, खगड़िया

(Courses Approved by UGC. AICTE, DEC, Ministry of HRD, Government of India)

Dr. H. Prasad

Admission Open

B.Ed Approved by NCTE, MBA all stream

GNM Aooroved by Nursing Council

POLYTECHNIC

Diploma in Mechanical, Civil, Electrical, Electronics & Communication & Computer Engineering

PARAMEDICAL

Master of Physiotherapy. Occupational Therapy, Medical Lab Technology, Radiation Technology, Optomerty and Ophthalmic Technology.

Bachelor of Physiotherapy. Occupational Therapy, Medical Lab Technology, Radiation Technology, Optomerty and Ophthalmic Technology.

PG Diplome in Drug Regulatory Affairs, Hospital Health Management, Geriatric Medicine, Maternal & Child Health.

Diploma in Medical Lab Technology, Ophthalmic Technology, Operation Theatre Technology, ECG Technology, Radiography Technology.

Contact No : 9431480925, 9852274380

Postal Regn. No. DL/ND-11/6139/2009-11, RNI No. 45843/86

चौथी दुनिया

दिल्ली, 25 अक्टूबर–31 अक्टूबर 2010

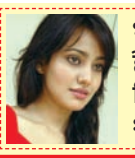

भागलपुर में कांग्रेस के एक वरिष्ठ नेता का मानना है कि बेटी नेहा शर्मा की पैरवी से ही अजीत शर्मा टिकट पाने में भी सक्षम हुए हैं. बहरहाल, अजीत शर्मा जोर-शोर से चुनावी तैयारी में जुटे हुए हैं.

नेहा के पापा की चुनावी जंग

अजीत शर्मा से ज़िले के बहुत से कांग्रेसी नाराज़ हैं. वह कुछ कांग्रेसियों को मनाने की जुगत में हैं तो कुछ को बस दुआ-सलाम करके अपना काम चला रहे हैं.

ज़ाहिर है इस ग्लैमर कनेक्शन का लाभ तो शर्माजी को मिलना ही था. अजीत शर्मा पहली बार कांग्रेस की टिकट से 1990 में बिहपुर विधासभा से चुनाव लड़े और हार गए. 2005 में फरवरी में हुए बिहार विधानसभा चुनाव में कांग्रेस आलाकमान ने अजीत शर्मा को बिहपुर से टिकट देने से मना कर दिया, तो शर्मा जी ने भागलपुर से टिकट की मांग कर दी. पैसे की ताक़त और संबंधी रहे पूर्व प्रदेश अध्यक्ष रामजतन सिन्हा का कमाल था कि उन्हें भागलपुर से टिकट मिल गया. लेकिन उनके हारने के रिकॉर्ड को देखते हुए कांग्रेस ने 2005 के नवंबर में हुए बिहार विधानसभा चुनाव में टिकट देने से मना कर दिया. शर्मा जी तुरंत कांग्रेस का हाथ छोड़कर हाथी पर सवार हो गए. विधानसभा चुनाव हारने के बावजूद उन्होंने 2009 के लोकसभा चुनाव में भागलपुर संसदीय क्षेत्र से बसपा से चुनाव लड़ा. संसदीय चुनाव में भी वही हुआ जो हर बार होता आया था, वो फिर हार गए. जहां विजयी उम्मीदवार भाजपा के शाहनबाज़ हुसैन को ढाई लाख से अधिक वोट मिले, वहीं इनको केवल छह हज़ार के आसपास वोट मिले.

शर्माजी की इस आयाराम गयाराम वाली हरकत को देखकर सबको यही लग रहा था कि उन्हें इस बार कांग्रेस में जगह नहीं मिलेगी. लेकिन इस बार कांग्रेस ने भागलपुर विधानसभा से टिकट तक दे डाला. टिकट किस आधार पर मिला, यह किसी को नहीं मालूम. वहीं भागलपुर में कांग्रेस के एक वरिष्ठ नेता का मानना है कि बेटी नेहा शर्मा की पैरवी से ही अजीत शर्मा टिकट पाने में भी सक्षम हुए हैं. बहरहाल, अजीत शर्मा ज़ोर-शोर से चुनावी तैयारी में जुटे हुए हैं. हर बार की तरह इस बार भी अजीत शर्मा गली-गली जाकर लोगों से वोट की अपील कर रहे हैं. कांग्रेसियों, पार्टी कार्यकर्ताओं और वोटरों को यही यकीन दिला रहे हैं कि मैं ही आपका अजीत शर्मा हूं. शर्मा जी से उनकी जीत के बारे में पूछने पर वो पिछले चुनावों में मिले वोट का ब्यौरा देना शुरू कर देते हैं. इस बार भी अपनी जीत को सुनिश्चित बताते हुए बेटी नेहा के चुनाव प्रचार में आने संबंधी बात को अफ़वाह करार देते हैं.

अजीत शर्मा से ज़िले के बहुत से कांग्रेसी नाराज़ हैं. शर्मा जी कुछ कांग्रेसियों को मनाने की जुगत में हैं, तो कुछ को बस दुआ सलाम कर अपना काम चला रहे हैं. वह अपने घर पर ही पार्टी का दफ्तर खोल चुके हैं. इस बार भी कार्यकर्ताओं के लिए धन द्वार खोल चुके हैं. विधानसभा क्षेत्र में चुनाव की बात होते ही सबकी ज़ुबान पर एक ही चर्चा होती है, क्या चुनाव के अंतिम दौर में नेहा पापा के चुनाव प्रचार में आएंगी? वैसे अजीत शर्मा को टिकट मिलने से भाजपा प्रत्याशी अश्विनी चौबे भी मन ही मन गदगद हैं.

कुमार सुशांत

kumarsushant@chauthiduniya.com

कहते हैं कि अगर एक बार जिस पर राजनीति और नेतागिरी का नशा चढ़ जाए फिर तो उतारे नहीं उतरता. सत्ता और कुर्सी पर नज़र कुछ यूं टिक जाती है कि फिर सारे नज़ारे धुंधले पड़ जाते हैं. उस पर लक्ष्मी भी मेहरबान हो तो कहने ही क्या. आप भी राजनीति के नशे में सराबोर ऐसे बहुत से नेताओं को जानते होंगे. लेकिन भागलपुर विधानसभा से कांग्रेस उम्मीदवार अजीत शर्मा की बात कुछ जुदा-जुदा सी है. इन पर यह नशा कुछ ज़्यादा ही सर चढ़कर बोल रहा है. अजीत शर्मा चार बार विधायक और एक बार सांसद का चुनाव लड़ चुके हैं. एक बार ज्योतिष ने तो शर्मा जी को यहां तक कह दिया कि आप चुनाव क्यूं लड़ते हैं, आपके हाथ की लकीरों में सांसद क्या, विधायक बनना भी नहीं लिखा है. लेकिन शर्मा जी हैं कि हर विधानसभा चुनाव में चुनाव लड़ते हैं और रुपया राशन-पानी की तरह ख़र्च करते हैं. लेकिन इस बार के चुनाव में शर्माजी की बेटी नेहा शर्मा ग्लैमर का तड़का लगा रही हैं. चुनाव के ऐन मौक़े पर उनकी बेटी नेहा शर्मा की फिल्म क्रुक रिलीज़ हुई. महेश भट्ट की इस फिल्म में नेहा के साथ इमरान हाशमी नज़र आ रहे हैं.

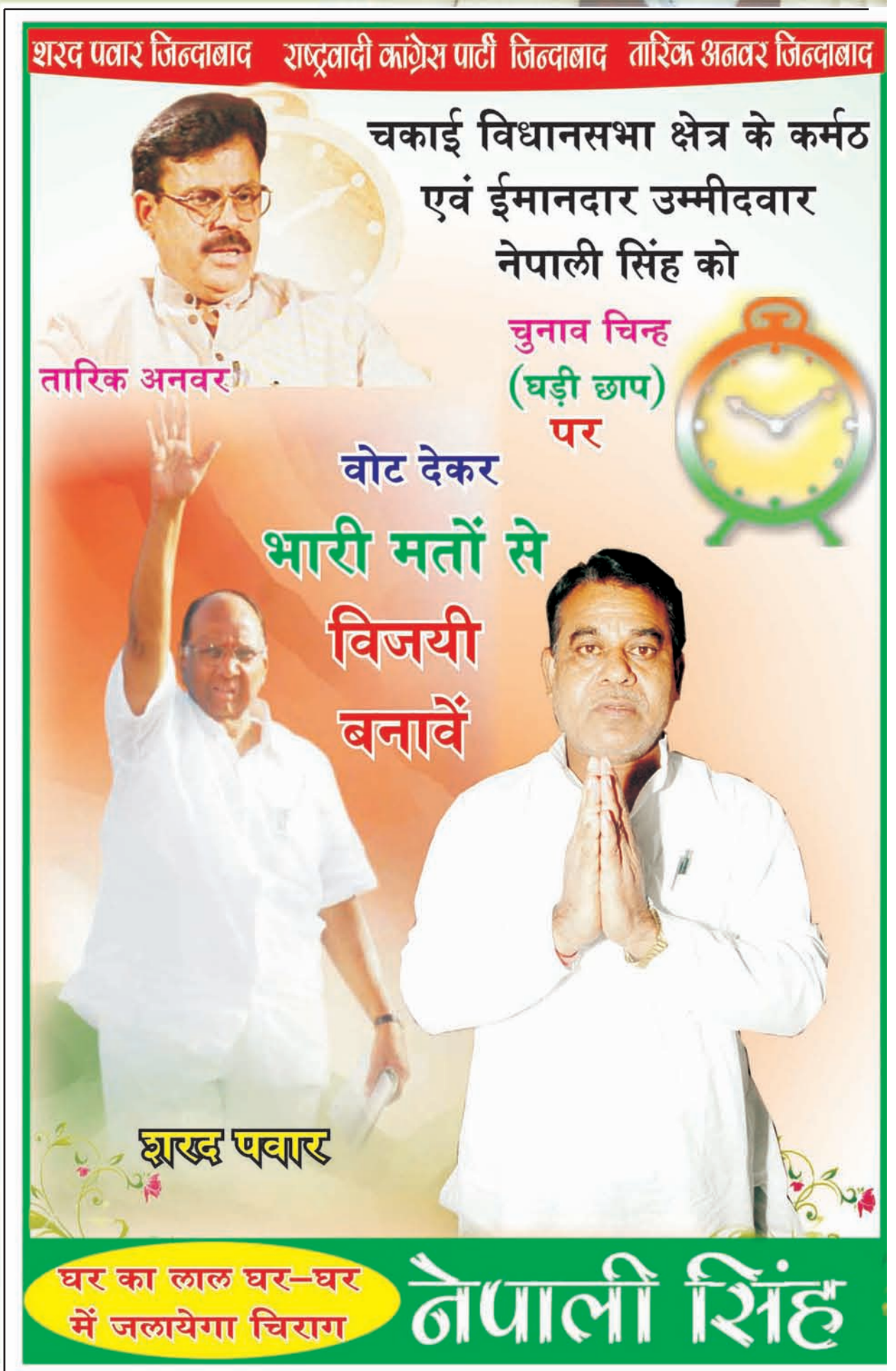

Rajbari Tea Lounge

THE TEA SUPERSTORE

India's leading chain of Tea Super Stores

Anything n Everything about TEA
All under one Super Store
◆ Tea Store ◆ Tea Accessories ◆ Tea Bar

Franchisee requirements
Space : 250-300 sq. ft. Investment : 4-5 Lacs
For information : www.rajbaritealounge.com
Call : 09430504070, 06456-225102 or
Email : rajbaritealounge@gmail.com

BHAGAT TOLI ROAD, KISHANGANJ (BIHAR)